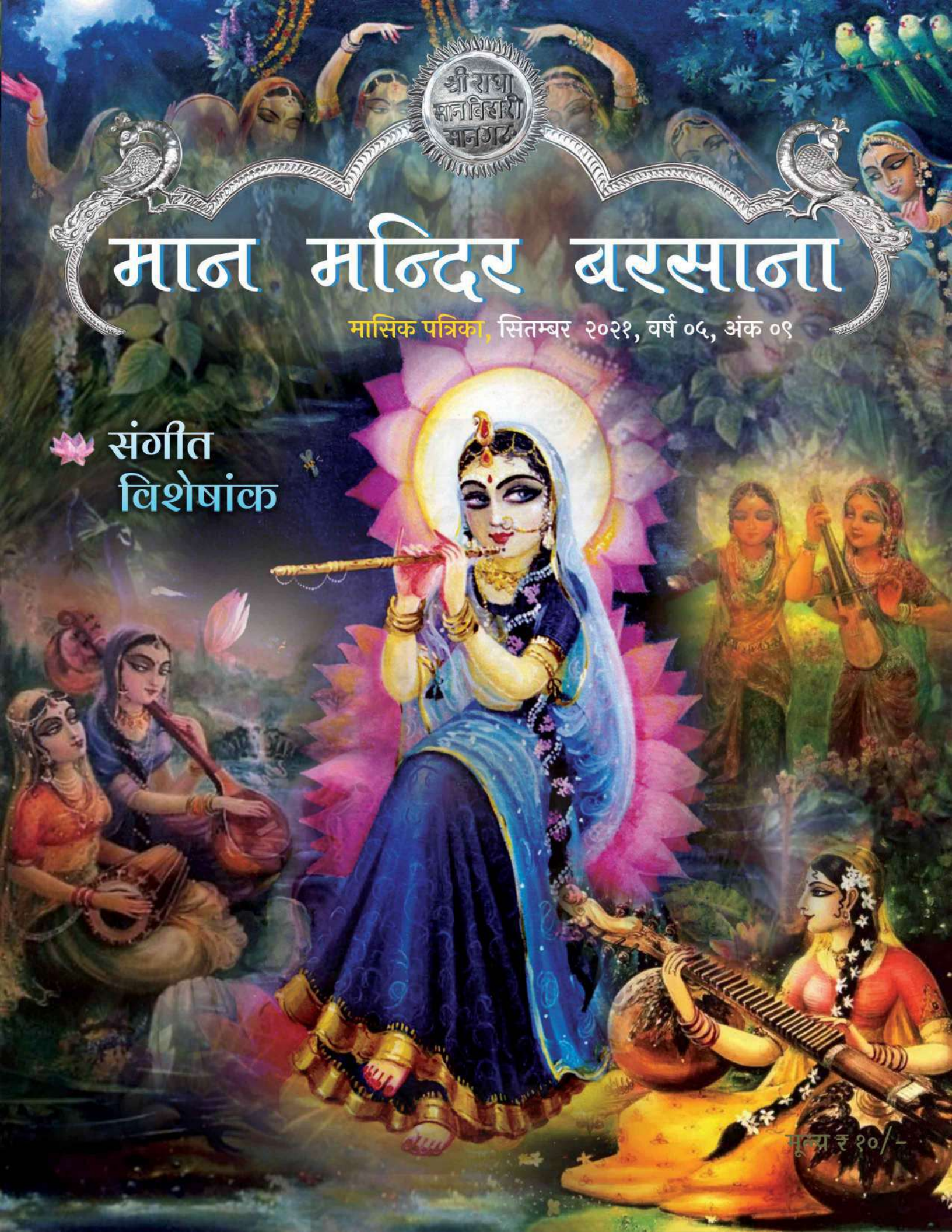

मान मन्दिर बरसाना
मासिक पत्रिका, सितम्बर २०२१, वर्ष ०५, अंक ०९
संगीत
विशेषांक
मूल्य ₹ १०/-

विरक्त संत परम पूज्य
श्री रमेश बाबाजी महाराज

श्री राधा संगीत विद्यालय

श्री मान मंदिर, गह्वरवन, बरसाना

अनुक्रमणिका

	विषय- सूची	पृष्ठ-संख्या
१	ब्रज के पर्वतों के संरक्षार्थ 'आन्दोलन' गति लेता हुआ	०३
२	बाबाश्री द्वारा 'श्रीराधा संगीत महाविद्यालय' की संस्थापना	०६
३	'श्री राधा संगीत महाविद्यालय' में संगीत सीख रहे विद्यार्थियों की सूची	१२
४	रसोपासना का साक्षात् स्वरूप 'संगीत'	१३
५	संस्कार व संस्कृति का आधार 'संगीत'	१७
६	संगीत-पथ प्रदर्शक संत	१८
७	श्रीभागवत में संगीत-वर्णन	२०
८	साक्षात् प्रेम-विग्रहिणी 'श्रीराधिका'	२५
९	परमप्रेममयी ब्रजभूमि	२९
१०	'सत्संग' ही साधन व साध्य	३०
११	डॉ. पूर्णिमा पाण्डेय (परिचय)	३२

श्री राधा जन्म बधाई

गावो गावो री बधायो, रानी कीरति के घर आज ||
रमक झमक के चलो भानुघर, सज धज के सब साज
राजा श्री वृषभानु महल में, मंगल के भये काज |
गांम गांम ते आईं नारी, लोगन जुरे समाज,
धौंसा की धधकार सुनो जहँ, ठाड़े हैं महाराज |
बीना वैन और सारंगी, महुवर हू रहे बाज,
कोउ नांचै कोउ हाँसी देवैं, कौन करे ह्वां लाज |
अनहोनी भई लली सोहनी, लोकन की सरताज,
जाके प्रगट होत बरसाने, सबके दुख गये भाज |
नन्दगाँव ते नन्द जसोदा, आये महल विराज,
कीरति जसुदा भेंटी जैसे, भेंटी हैं द्वै गाज |
लाली ढिंग लाला पौढ़ायो, जोरी अति छवि छाज,
पलना में खेलैं और किलकैं, रूप के दोउ जहाज ||

— पूज्यश्री बाबा महाराज कृत

|| राधे किशोरी दया करो ||

हमसे दीन न कोई जग में,
बान दया की तनक ढरो |
सदा ढरी दीनन पै श्यामा,
यह विश्वास जो मनहि खरो |
विषम विषयविष ज्वालमाल में,
विविध ताप तापनि जु जरो |
दीनन हित अवतरी जगत में,
दीनपालिनी हिय विचरो |
दास तुम्हारो आस और की,
हरो विमुख गति को झगरो |
कबहूँ तो करुणा करोगी श्यामा,
यही आस ते द्वार पर्‌यो |

— पूज्यश्री बाबा महाराज कृत

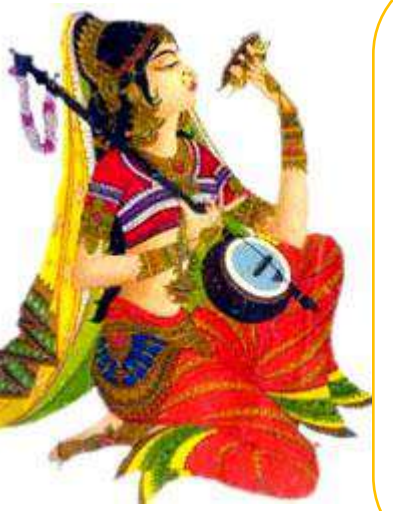

संरक्षक-

श्रीराधामानबिहारीलाल

प्रकाशक – राधाकान्त शास्त्री,

मानमंदिर सेवा संस्थान,

गह्वरवन बरसाना, मथुरा (उ.प्र.)

(Website :www.maanmandir.org)

(E-mail :info@maanmandir.org)

mob. Radhakant Shastri 9927338666

Brajkishordas 6396322922

श्रीमानमंदिर की वेबसाइट www.maanmandir.org के द्वारा आप प्रातःकालीन सत्संग का ८:०० से ९:०० बजे तक तथा संध्याकालीन संगीतमयी आराधना का सायं ६:०० से ७:३० बजे तक प्रतिदिन लाइव प्रसारण देख सकते हैं |

परम पूज्यश्री रमेश बाबा महाराज जी द्वारा सम्पूर्ण भारत को आह्वान –

"मजदूर से राष्ट्रपति और झोंपड़ी से महल तक रहने वाला प्रत्येक भारतवासी विश्वकल्याण के लिए गौ-सेवा-यज्ञ में भाग ले |"

*** योजना ***

अपनी आय से १ रुपया प्रति व्यक्ति प्रतिदिन निकाले व मासिक, त्रेमासिक, अर्धवार्षिक अथवा वार्षिक रूप से इकट्ठा किया हुआ सेवा द्रव्य किसी विश्वसनीय गौ सेवा प्रकल्प को दान कर गौ-रक्षा कार्य में सहभागी बन अनंत पुण्य का लाभ लें | हिन्दू शास्त्रों में अंश मात्र गौ सेवा की भी बड़ी महिमा का वर्णन किया गया है |

विशेष:- इस पत्रिका को स्वयं पढ़ने के बाद अधिकाधिक लोगों को पढ़ावें जिससे आप पुण्यभाक् बनें और भगवद्-कृपा के पात्र बनें | हमारे शास्त्रों में भी कहा गया है –

सर्वे वेदाश्च यज्ञाश्च तपो दानानि चानघ | जीवाभयप्रदानस्य न कुर्वीरन् कलामपि || (श्रीमद्भागवत३/७/४१)

अर्थ:- भगवत्तत्त्वके उपदेश द्वारा जीव को जन्म-मृत्यु से छुड़ाकर उसे अभय कर देने में जो पुण्य होता है, समस्त वेदों के अध्ययन, यज्ञ, तपस्या और दानादि से होनेवाला पुण्य उस पुण्य के सोलहवें अंशके बराबर भी नहीं हो सकता |

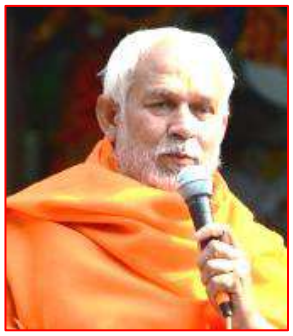

प्रकाशकीय

पत्र-पत्रिकाओं का पठन-पाठन यद्यपि लगभग समाप्त-सा ही हो गया है, फिर भी ग्राहकता अभी मिटी नहीं है | हमारे पास बहुत-से पत्र व फोन आते हैं कि हमें भी मानमन्दिर की पत्रिका अवश्य भेजी जाए | विशुद्ध भगवत्प्रेम में बाँधने की पूर्णरूपेण जिज्ञासा यहाँ के लेखकों की बनी रहती है | भक्तों की भावना का सत्कार प्रभु भी अवश्य करते हैं | कलिकाल ने यद्यपि भौतिकवाद के माध्यम से अपना आधिपत्य सर्वत्र कर लिया है परन्तु 'सनातन संस्कृति' मिट नहीं सकती | 'ब्रज के परम विरक्त सन्त बाबाश्री का नित्य सत्संग व मानमन्दिर की गतिविधियाँ' अवश्य ही ब्रजमण्डल में ही नहीं सम्पूर्ण जनमानस में दिव्य चेतना का स्रोत प्रवाहित कर रही हैं | 'श्रीभगवल्लीलाओं का नित्य गायन हो अथवा प्रभात-फेरियों का सतत संचालन' सभी ने कलियुग को शक्तिहीन बनाने का कार्य किया है |

'श्रीबाबामहाराज द्वारा संगीत-शिक्षण की प्रेरणा' जो सभी बालक-बालिकाओं के माध्यम से सर्वव्यापी सिद्ध होगी | 'संगीत' रसरूप विद्या है, जिससे श्रीभगवत्प्रेम की वृद्धि सहज सम्भव है; ऐसे बहुत सारे विषय वर्तमान अङ्क में वर्णित हैं जो आपके हृदय के भूषण बनेंगे |

प्रबन्धक

राधाकान्त शास्त्री

श्रीमानमंदिर सेवा संस्थान ट्रस्ट

ब्रज के पर्वतों के संरक्षार्थ 'आन्दोलन' गति लेता हुआ

(ब्रज के गाँव-गाँव में ब्रजवासीजन हो रहे हैं संगठित)

'आदिबद्री पर्वत के रक्षार्थ २१७ दिनों से चल रहा **धरना**' मानमंदिर सेवा संस्थान के विरक्त सन्त पद्मश्री **'श्रीरमेशबाबा के धैर्य की कहानी'** स्वर्णिम अक्षरों में लिख रहा है; संघर्षों से जूझता उनका जीवन कभी पराभव की ओर उन्मुख नहीं हुआ | पराभव क्यों ? क्योंकि स्वार्थ का प्रवेश वहाँ नहीं है | राधामाधव की लीलास्थलियों में उन्हें केवल राधाकृष्ण की छवि ही दिखाई पड़ती है, अतः उन्हें विश्वास है कि यह लड़ाई वे अवश्य जीतेंगे | इस बीच 'कोरोना महामारी' ने भी मानो कलियुग का रूप ही धारण कर लिया हो और वह सद्-असद् के मध्य अपनी पूरी शक्ति का उपयोग कर 'सत्य का पराजय' देखने को ही आतुर हो परन्तु ऐसा हो नहीं सकता | अब कुछ सकारात्मक तथ्य भी नजर आने लगे हैं | '११ दिवसीय चेतना यात्रा' के दौरान भरतपुर जनपद की कामाँ, डीग, नगर, पहाड़ी तहसीलों में लोक-जागरण का बड़ा कार्य हुआ और उसके पश्चात् १४ लोगों द्वारा जो 'आमरण-अनशन' प्रारम्भ किया गया, उसने पुनः आन्दोलन को अमर बना दिया | सरकार के साथ वार्ता प्रारम्भ हुई और लगने लगा कि कुछ सकारात्मक परिणाम अवश्य आयेंगे | प्रदेश के कई मन्त्रियों के साथ वार्ता में आश्वस्त आन्दोलनकारियों ने 'आमरण-अनशन' को 'क्रमिक-अनशन' में बदल दिया गया | रक्षाबन्धन के पश्चात् किसी ठोस वार्ता की सम्भावना जताई जा रही है | यदि परिणाम सकारात्मक नहीं होते हैं तो मानमन्दिर बड़ी तैयारी में जुट गया है | वृन्दावन सहित सारे प्रदेश में सभी मूर्धन्य सन्तों के द्वारा मुख्यमन्त्री अशोक गहलोत को पत्र-प्रेषण का कार्य शुरू कर दिया गया है | विदेशों से भी पत्राचार प्रारम्भ हुआ है | <u>गाँव-गाँव में सक्रिय सदस्य बनाने का कार्य तेजी से चलाया जा रहा है, कई हजार सदस्य बनाये जा चुके हैं |</u> कुछ राजनैतिक लोग स्वयं खनन से जुड़े हुए हैं, इस कारण वे कभी नहीं चाहते कि खनन-कार्य बन्द हो, परन्तु यह निश्चित है कि आसुरी-शक्तियाँ सदा परास्त ही हुई हैं | सन् २००८ में जब ५२३२ हेक्टेयर भू-भाग आरक्षित वन घोषित हुआ था, उस समय भी आसुरी-शक्तियों का बोलबाला था परन्तु सबको ब्रज छोड़कर भागना पड़ा था | ब्रज का एक-एक कण साक्षात् राधामाधव का वपु है, फिर उसे कैसे अलग किया जा सकता है ?

करोड़ों श्रद्धालुओं की आस्था के इस केन्द्र को हम सबको मिलकर बचाना ही चाहिए | मैं सभी पाठकों से भी यह अपील करता हूँ कि आप भी राजस्थान के मुख्यमन्त्री के नाम पत्र लिखकर अपनी भावना अवश्य व्यक्त करें कि 'आदिबद्री और कनकांचल' जैसे दिव्य पर्वतों को खनन-मुक्त कर समस्त क्षेत्र वन-विभाग को दे दिया जाए |

सदस्यता अभियान जारी

मुख्यमंत्री आदिबद्री पर्वत को संरक्षित व सुरक्षित करें

छह सितम्बर को पसोपा में होगा अधिवेशन

पत्रिका न्यूज़ नेटवर्क
patrika.com

डीग. आदि बद्री व कनकाचल पर्वत पर हो रहे खनन के विरोध में जारी धरने के 216 दिन गांव पसोपा में धरना स्थल पर ग्रामीण व साधु-संतों का क्रमिक अनशन जारी रहा। शुक्रवार को राधेश्याम, हनुमान बाबा, नारायण बाबा, महेंद्र एवं चन्नी भगत क्रमिक अनशन पर बैठे। मलूक पीठाधीश्वर राजेंद्रदास ने आंदोलनकारियों की बैठक की अध्यक्षता करते हुए आगे की कार्रवाई के बारे में जानकारी ली। कहा कि देशभर के सभी साधु संतों को इस आंदोलन के बारे में पूर्ण रूप से अवगत कराया जाए।

उन्होंने पथमेड़ा गौशाला के दत्तशरणानंद से भी आग्रह किया कि वह शीघ्र मुख्यमंत्री से वार्ता कर ब्रज के दोनों आराध्य पर्वत कनकाचल व आदिबद्री को खनन की विभीषिका से मुक्त कराकर संरक्षित करवाएं। इस अवसर पर संरक्षण समिति के अध्यक्ष महंत शिवरामदास, संरक्षक राधाकांत शास्त्री, हरि बोल बाबाए भूरा बाबा, कृष्ण दास, ब्रजशरण बाबा आदि मौजूद थे।

डीग. गांव पसोपा में क्रमिक अनशन पर बैठे साधु व अन्य।

इधर, आंदोलन के सक्रिय सदस्यता अभियान में ब्रजकिशोर बाबा के नेतृत्व में कई गांवों में जनसंपर्क और सभाएं कर सैकड़ों सक्रिय सदस्य बनाए गए। ब्रजकिशोर बाबा ने बताया कि अभी तक उत्तरप्रदेश एवं राजस्थान के 40 से अधिक गांवों में जनसभाएं की जा चुकी हैं व हर गांव में से 100 से 200 के बीच में सक्रिय सदस्य बनाए जा चुके हैं। उन्होंने बताया कि आगामी 6 सितंबर को 75 गांवों के सक्रिय सदस्य एवं सचिवों का अधिवेशन पसोपा धरना स्थल पर रखा गया है।

ग्रामीण व वैष्णवों को दिलाई गई सक्रिय सदस्यता

खनन को लेकर अब विदेशों में भी उठाएंगे आवाज

पत्रिका लाइव रिपोर्ट

पसोपा में 208वे दिन भी जारी धरना

पत्रिका न्यूज़ नेटवर्क
patrika.com

डीग. गांव पसोपा में धरना प्रदर्शन करते साधु संत और ग्रामीण।

डीग. गांव पसोपा में कनकाचल व आदिबद्री पर्वत पर हो रहे विनाशकारी खनन के विरुद्ध चल रहे धरने के 208 वें दिन बुधवार को सक्रिय सदस्यता अभियान के पहले दिन संरक्षक राधाकांत शास्त्री व समन्वयक ब्रजकिशोर बाबा की उपस्थिति में आसपास के गांवो में आंदोलन से जुड़े डेढ़ सौ से अधिक ग्रामीण एवं वैष्णवों को आंदोलन की सरि य सदस्यता दिलाई गई। सदस्यों ने भगवान आदिबद्रीनाथ के समक्ष ब्रज के पर्यावरण, पर्वतों व पौराणिक संपदा की रक्षा करने की शपथ ली।

इस अवसर पर पूर्व विधायक गोपी गुर्जर ने कहा कि सरि य सदस्यता अभियान के माध्यम से ब्रज के सर्वांगीण विकास के लिए एक विशाल व मजबूत संगठन खड़ा किया जाएगा। जो सतत ब्रज के पर्यावरण, प्रकृति, संस्कृति व प्राचीन संपदा की रक्षा व संवर्धन के लिए तत्पर होगा। ब्रजकिशोर बाबा ने बताया कि इस अभियान के तहत ब्रज क्षेत्र के लगभग एक हजार से अधिक गांवों में समितियों का गठन किया जाएगा एवं हर दस गांव पर मंडल सचिव व संभाग प्रभारी नियुक्त कर इस अभियान को एक मजबूत संगठन का रूप दिया जाएगा। ताकि अधिक से अधिक ब्रज वासियों व वैष्णवों की जिम्मेदारी तय की जा सके। राधाकांत शास्त्री ने कहा विदेशों में रह रहे ब्रज के भक्तों ने भी आदिबद्री व कनकाचल पर्वत पर हो रहे खनन के प्रति आर ोश जताते हुए इसके विरोध में उन देशों में विरोध प्रदर्शन करने की अनुमति मांगी हैं। बुधवार को समिति ने निर्णय लिया है कि अमेरिका, इंग्लैंड, ऑस्ट्रेलिया आदि देशों के कुछ शहरों में जहां कृष्ण भक्तों और वैष्णवों की अधिकता हैं। वहां आदिबद्री व कनकाचल पर्वत पर हो रहे विनाशकारी खनन को लेकर प्रदर्शन किया जाए।

आंदोलन को सदस्यता अभियान शुरू, धरना 207वें दिन भी जारी

पत्रिका लाइव रिपोर्ट

एक माह में एक लाख से अधिक सदस्य बनाने का लक्ष्य

पत्रिका न्यूज़ नेटवर्क
patrika.com

डीग. गांव पसोपा में क्रमिक अनशन और धरने पर बैठे साधु व ग्रामीण।

डीग. आदिबद्री व कनकाचल पर्वत पर हो रहे खनन को पूर्णतया बंद कराने के मांग को लेकर उपखंड के गांव पसोपा जारी धरने के 207 वे दिन मंगलवार को आंदोलन आगामी रणनीति को तय करने के लिए आंदोलनकारियों की एक बैठक आदिबद्री धाम में आहूत की गई जिसमें सर्व सम्मति से आंदोलन को गति देने के लिए एक लाख सक्रिय सदस्य बनाने का निर्णय लिया गया। महंत शिवराम दास की अध्यक्षता में संपन्न हुई बैठक में पूर्व विधायक गोपीचंद गुर्जरए समिति के संरक्षक राधा कांत शास्त्री, सक्रिय सदस्यता अभियान के समन्वयक ब्रजकिशोर बाबा, हरि बोल दास बाबा, भूरा बाबा, मुकेश शर्मा, सुल्तान सिंह प्रमुख रूप से मौजूद रहे। बैठक में सक्रिय सदस्यता अभियान की जिम्मेदारी मान मंदिर के संत ब्रजकिशोर बाबा को सौंपी गई। पूर्व विधायक गुर्जर ने बताया है कि वर्तमान में जिले में लागू चुनाव आचार संहिता के दौरान आंदोलन के अंतर्गत जो बड़े कार्यक्रम होने हैं उनकी भी रूपरेखा बैठक में तय की गई। जिसमें प्रमुख रूप से संत सम्मेलनए गौ सेवक सम्मेलन एवं पर्यावरण सम्मेलन सम्मिलित है। मंगलवार को धरना स्थल पर ब्रजकिशोर बाबाए संत सेनानायक, राजीव शर्मा, राधे श्याम बाबा, देवी सिंह क्र मिक अनशन पर बैठे।

राजस्थान पत्रिका
भरतपुर, बुधवार, 18 अगस्त, 2021

तीन हजार से अधिक ग्रामीणों के आंदोलन की सक्रिय सदस्यता का दावा

संरक्षित क्षेत्र घोषित नहीं किया तो दुबारा करेंगे आमरण अनशन

पत्रिका लाइव रिपोर्ट

पत्रिका न्यूज़ नेटवर्क
patrika.com

डीग. आदिबद्री कनकांचल पर्वत पर खनन के विरोध धरना देते हुए।

डीग. आदिबद्री व कनकाचल पर्वत को खनन मुक्त कराने के लिए जारी धरने के 213वें दिन मंगलवार को धरना स्थल पर आंदोलनकारियों का क्रमिक अनशन जारी रहा। मंगलवार को संत हनुमान बाबा, नारायण बाबा, निवृतिदास बाबा, रमेश महाराज, महेंद्र कुमार दास क्रमिक अनशन पर बैठे।

धरना स्थल पर सरकार समिति के अध्यक्ष राधाकांत शास्त्री ने पुनः सरकार एवं मुख्य सचेतक महेश जोशी एवं विधायक वाजिब अली को संदेश देते हुए कहा कि वह किए गए वायदे के अनुसार शीघ्र ही हमारी मुख्यमंत्री के साथ निर्णायक बैठक कराकर आदिबद्री और कनकांचल पर्वत को खनन मुक्त कराएं। अन्यथा सैकड़ों की संख्या में साधु संत आमरण अनशन पर बैठ जाएंगे। इस बार आमरण अनशन रूप किसी भी स्थिति में परिवर्तित हो सकता है। मान मंदिर के पूर्व डीजीपी बिहार आनंद शर्मा ने आंदोलन से जुड़े आगामी कार्यक्रमों की घोषणा करते हुए बताया कि नौ सितम्बर को जड़खोर में साधु संतों का अधिवेशन, दो सितम्बर को गौ रक्षा सम्मेलन व छह सितम्बर को सक्रिय सदस्यों के प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया जाएगा। इसमें बड़ी संख्या में लोग शामिल होकर ब्रजभूमि व ब्रज के गोचर पर्वतों के संपूर्ण संरक्षण के लिए प्रतिबद्धता दिखाएंगे। सक्रिय सदस्यता अभियान के तहत बसंत ब्रज किशोर के नेतृत्व में ब्रज वासियों ने विगत सात दिनों में बौलखेड़ा, डभाला, रांकोली, बरसाना, सतवास, बड़ा घाटा, इकलहरा, मांतुकी, खोह, चिकसौली, हीस का नगला, नहरा आदि गांवों में जनसभाएं कर बड़ी संख्या में लोगों को सक्रिय सदस्य बनाया है। अब तक लगभग तीन हजार से अधिक सक्रिय सदस्य बनाए जा चुके हैं। मंगलवार को सतवास में ही 200 से अधिक, बड़ा नहरा गांव में लगभग 150 एवं एचवाड़ा में 100 सदस्यों ने आंदोलन की सक्रिय सदस्यता ली। सीताराम गुर्जर को बौलखेड़ा, पूर्व सरपंच रामधन को मांतुकी, पूर्व सरपंच इंदल को सतवास, रामकिशन को रांकोली, बबलू को बड़ा नहरा, प्रेम सिंह को खोह, विपिन को छोटा नहरा, गोविंद को इकलहरा, सचिन को एचवाड़ा का ग्राम सचिव नियुक्त किया गया।

शीघ्र एक लाख की जाएगी सक्रिय सदस्यों की संख्या

ब्रजकिशोर बाबा ने कहा यह अभियान एक बहुत बड़ी मुहिम का रूप ले रहा है। इस अभियान के तहत ब्रजवासियों को न केवल ब्रज के पर्वतों की रक्षा के बारे में जागृत किया जा रहा हैं अपितु इस प्रकार हम संगठित होकर संपूर्ण ब्रज को एक विकसित एवं अलौकिक प्रदेश बना सकते हैं। इस बारे में भी जानकारी साझा कर रहे हैं। उन्होंने विश्वास व्यक्त किया कि शीघ्र ही अभियान के सदस्यों की संख्या लक्ष्य के अनुसार एक लाख हो जाएगी। इस अवसर पर उनके साथ रूपकिशोर, मोहनदास, कन्हैया दास, श्यामसुंदर दास, राजवीर भगत आदि लोग मौजूद थे।

सक्रिय सदस्यता अभियान बना एक बड़ी मुहिम
सैकड़ों गांव में बनाए गए सक्रिय सदस्य

आंदोलनकारियों का प्रतिनिधिमंडल मिला कई कांग्रेसी नेताओं से कहा करें ब्रज की संस्कृति व पर्यावरण की रक्षा यही है राजधर्म

आंदोलन के प्रतिनिधि मंडल ने किया प्रदेश भर के संतो से संपर्क

ब्रज के पर्वतों को बचाने महिलाएं क्रमिक अनशन पर

गांव पसोपा में चल रहा धरना

पत्रिका न्यूज़ नेटवर्क
patrika.com

डीग. गांव पसोपा में क्रमिक अनशन पर बैठी महिलाएं।

डीग. आदिबद्री कनकाचल पर्वत को खनन मुक्त कराने के लिए जारी धरने के 214 दिन बुधवार को धरना स्थल पर ग्रामीणों ने इस मुहिम को ब्रज की सच्ची सेवा का दर्जा देते हुए महिलाओं ने आगे आकर अपनी संपूर्ण सहभागिता प्रदर्शित की। बुधवार को पसोपा गांव की महिलाएं विरमा देवी, शांति देवीए वेदों देवी एवं फूलवती क्रमिक अनशन पर बैठी। आंदोलनकारियों का एक प्रतिनिधिमंडल ने महन्त शिवरामदास दास के नेतृत्व में ब्रज क्षेत्र व प्रदेश भर के प्रमुख साधु-संतों से आंदोलन को लेकर संपर्क किया। जिनमें प्रमुख रूप से जोधपुर के संत रामप्रसाद महाराज सुरसागर, रामद्वारा आश्रम, सैनाचार्य स्वामी अचलानंदगिरी महाराज पीठाश्रव सैन भक्ति पीठ जोधपुर, जयपुर के बालगोपाल दास महाराज अवधेशानंद महाराजए सियाराम दास महाराज आदि शामिल थे। संतों ने ब्रज के पर्वत आदिबद्री व कनकाचल को संरक्षित करना अत्यंत आवश्यक बताया साथ ही राजस्थान के मुख्यमंत्री से आग्रह किया कि सनातन संस्कृति की रक्षा के लिए एवं साधु संतों व करोड़ों कृष्ण भक्तों की भावना को देखते हुए अविलंब ब्रज के दोनों प्रमुख पर्वतों को खनन मुक्त कर संरक्षित करें। बुधवार को बरसाना में मान मंदिर के ब्रजदास के नेतृत्व में सैकड़ों गौ रक्षकों ने आंदोलन की सरि य सदस्यता ग्रहण कर ब्रज के गोचर पर्वतों की रक्षा के लिए अपनी पूर्ण प्रतिबद्धता प्रदर्शित की एवं हर संघर्ष के लिए पूर्णतः तत्पर रहने की बात कही। इस अवसर पर संत सर्वेश्वर दास, मोहित चौधरी, किशनए बबलू सिंह, राकेश, विश्वेन्द्र, भरत, सीताराम भगत आदि प्रमुख रूप से उपस्थिति रहे।

ब्रज के गाँव गाँव में "ब्रज पर्वत एवं पर्यावरण संरक्षण समिति" के सक्रिय सदस्य बनते ब्रजवासी जन

बाबाश्री द्वारा 'श्रीराधा संगीत महाविद्यालय' की संस्थापना

श्रीभगवान् की आराधना में संगीत का बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है | प्रह्लादजी द्वारा कथित नवधा भक्ति में 'श्रवण' के बाद 'कीर्तन' को लिया गया है | कीर्तन क्या है ? श्रीभगवान् के नाम, रूप, लीला, गुण, धाम, धामी, जन इत्यादि की महिमा का गान ही कीर्तन है | 'गान करना ' संगीत का एक महत्वपूर्ण अंग है | जैसा कि संगीत के बारे में कहा गया है –

गीतं, वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते |

'गायन, वादन और नृत्य' की त्रिवेणी ही संगीत है | सनातन धर्म में श्रीभगवान् की उपासना के लिए 'संगीत ' को बहुत अधिक महत्त्व दिया गया है | स्वयं भगवान् ने नारदजी से कहा है –

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च |
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ||

"मैं न तो वैकुण्ठ में रहता हूँ और न ही योगियों के हृदय में; मेरे भक्त जहाँ प्रेम से गायन करते हैं, मैं वहीं निवास करता हूँ |" श्रीभगवान् के इस वचन से पता पड़ता है कि भगवान् को उपासना की अन्य विधाओं में गायन अर्थात् संगीत के त्रिविध अङ्ग 'गायन, वादन तथा नृत्य' ही सर्वाधिक प्रिय हैं | ब्रजभूमि के आराध्य श्रीराधामाधव की रसोपासना का तो प्राण ही है - संगीत | श्रीश्यामाश्याम की प्रत्येक लीला में संगीत की रस-धारा सदा ही प्रवाहित होती रहती है | श्यामाश्याम के आराधकजनों ने 'संगीत ' को ही अपनी आराधना का एक महत्पूर्ण साधन बनाया है | जैसे - श्रीकृष्णावतार चैतन्यमहाप्रभुजी ने भक्ति के सशक्त प्रचार के लिए संकीर्तन-आन्दोलन का सूत्रपात किया | जगन्नाथजी की रथयात्रा में महाप्रभु के अनुयायी वैष्णवजन उनके नेतृत्त्व में संगीत के विभिन्न आयामों को लेकर संकीर्तन करते हुए चलते थे | अनेकों भक्त ढोल–मृदंग बजाते हुए चलते थे, बहुत-से वैष्णव झाँझ, करताल और विभिन्न प्रकार के वाद्ययन्त्र बजाते हुए कीर्तन करते थे और सबके मध्य में स्वयं महाप्रभुजी अत्यधिक आवेश के साथ नृत्य किया करते थे; उनके इस अद्भुत संगीतमय संकीर्तन और नृत्य को देखने के लिए कई बार 'जगन्नाथजी का रथ' मार्ग में रुक जाता था | इसी प्रकार ललिता सखी के अवतार अनन्य नृपति स्वामी हरिदासजी ने भी श्रीवृन्दावन में नित्यविहार की रसोपसना में 'संगीत' को ही मुख्य आधार बनाया | उनकी संगीतमयी साधना के बारे में गोस्वामी नाभाजी ने श्रीभक्तमालजी में लिखा है –

"गान कला गन्धर्व श्याम श्यामा को तोषैं" –

श्रीस्वामीजी की अलौकिक गान-कला के समक्ष स्वर्ग के संगीत विशारद गन्धर्व तो मात्र एक कला ही थे | स्वामीजी अपने इस संगीत के माध्यम से एकमात्र श्रीश्यामाकुंजबिहारी को ही रिझाया करते थे, उनके संगीत का उद्देश्य लोक-रंजन करना नहीं था; उन्हीं से संगीत -विद्या का प्रशिक्षण प्राप्त करके तानसेन भारत का प्रसिद्ध संगीत -सम्राट बना और अकबर के दरबार में नवरत्न के रूप में सुशोभित हुआ | इसी प्रकार महाप्रभु वल्लभाचार्यजी ने गिरिराज गोवर्धन में श्रीनाथजी की संगीत मयी आराधना के लिए अष्टछाप के वैष्णवों की नियुक्ति की; इनमें सूरदासजी, कुम्भनदासजी, परमानन्ददासजी और कृष्णदासजी तो महाप्रभु वल्लभाचार्यजी के शिष्य थे तथा 'गोविन्दस्वामी, छीतस्वामी, नन्ददासजी एवं चतुर्भुजदासजी' महाप्रभुजी के सुपुत्र गोस्वामी श्रीविट्ठलनाथजी के शिष्य थे; अष्टछाप

के ये संत कवि श्रीनाथजी के मंदिर में स्वरचित पदों के गायन द्वारा श्रीप्रभु की आराधना किया करते थे, इनमें गोविन्दस्वामीजी तो बहुत बड़े सिद्ध गायक थे, जिनका संगीत सुनने के लिए स्वयं संगीत -सम्राट तानसेन गोकुल में आया था और इनके दिव्य गान को सुनकर वह अपनी गान-कला को तुच्छ मानने लगा | आज भी गोकुल में एक स्थान है, जिसका नाम है – 'गोविन्दस्वामी की टेकरी' | वहाँ पर गोविन्दस्वामीजी 'श्रीश्यामसुंदर' के साथ गाया करते थे; एक बार गोस्वामी विट्ठलनाथजी ने उनसे पूछा कि क्या कभी श्रीस्वामिनीजी भी वहाँ आकर गायन करती हैं ? गोविन्दस्वामीजी ने कहा कि हाँ, कभी-कभी श्रीप्रियाजी भी वहाँ उपस्थित होकर गाती हैं | गोस्वामीजी ने पूछा कि श्यामसुंदर और राधारानी में कौन अधिक श्रेष्ठ गाता है तो गोविन्दस्वामीजी ने कहा कि वैसे तो श्रीनाथजी ही बहुत बढ़िया गाते हैं परन्तु जब श्रीजी गाती हैं तो उनके गायन के समक्ष तो ठाकुरजी का गायन भी फीका पड़ जाता है | स्वामिनीजी के गायन को सुनकर तो वन की समस्त कोकिलायें भी मौन धारण कर लेती हैं |

"राधे तेरे गावत कोकिलागन.....रहें री मौन ....|"

गोपिकावतार प्रेम दीवानी श्रीमीराबाईजी की आराधना का तो एकमात्र साधन ही था 'नृत्य-गान'; वे स्वयं अपने एक पद में कहती हैं –

मैं तो कृष्ण कन्हैया गायो करूँ |
जहाँ-जहाँ पाँव धरूँ धरती पर,
तहाँ तहाँ ही मैं नाच्यो करूँ ||

श्रीमीराजी ने 'नृत्यगानमयी आराधना' को रसीली-भक्ति की संज्ञा दी है, वे कहतीं हैं कि मैंने इस रसीली भक्ति की स्वयं अपने गिरधारीलाल से याचना की थी और उन्होंने मुझे इसे प्रदान किया |

गाय-गाय हरि के गुण निशदिन, काल व्याल सों बाँची |
'मीरा' श्रीगिरधरण लाल सों, भगति रसीली जाँची ||

गिरधरगोपाल द्वारा प्रदान की गयी इस रसीली भक्ति का यह चमत्कार हुआ है कि निरन्तर गायन और नृत्य के कारण मैं सारे संसार का भक्षण करने वाले कराल काल रूपी सर्प के भक्षण से मुक्त हो गयी हूँ |

वास्तव में मीराजी काल-व्याल से इस प्रकार मुक्त हुईं कि उनकी मृत्यु नहीं हुई, अपने अंतिम समय में वे द्वारिका चली गयीं और वहाँ मन्दिर में पद-गायन और नृत्य करते हुए वे इसी शरीर से श्रीठाकुरजी के श्रीविग्रह में लीन हो गयीं |

इस प्रकार सभी कृष्णभक्तों ने 'संगीत ' के माध्यम से रसीली भक्ति को करते हुए समाज के कल्याण के लिए इसका प्रचार-प्रसार किया | श्रीब्रजोपासना की श्रृंखला में ब्रजभूमि के अनन्य उपासक परम श्रद्धेय श्रीरमेशबाबाजी महाराज भी जब अपनी जन्मभूमि प्रयाग से ब्रजभूमि में राधारानी की क्रीड़ास्थली बरसाना में उनके मानभवन श्रीमानमन्दिर में पधारे तो उन्होंने भी 'संगीत मयी आराधना' को अपनी साधना का प्रमुख आधार बनाया | यह तो सर्वविदित है कि जिस समय श्रीबाबा महाराज का मानगढ़ पर पदार्पण हुआ, उस समय श्रीजी की मानलीला की यह दिव्य स्थली एक जीर्ण-शीर्ण खण्डहर के रूप में चोर-डाकुओं, भूत-प्रेतों और सर्पों की आश्रय-स्थली बनी हुई थी; यह स्थान इतना भयानक बन चुका था कि दोपहर के समय भी कोई यहाँ पाँव नहीं रखता था, ऐसे भीषण स्थल के उद्धार हेतु भगवान् की आराधना ही एकमात्र असली अवलम्बन था | अतः श्रीबाबामहाराज ने सर्वप्रथम तो मानमंदिर के नीचे स्थित गाँव 'मानपुर' में नाम-कीर्तन के प्रचार द्वारा ब्रजवासियों के हृदय में भक्ति का बीजारोपण किया | तदनन्तर गाँव में कुछ असामाजिक तत्त्वों द्वारा कीर्तन में बाधा उपस्थित करने पर महाराजश्री ने मानगढ़ में ही संगीत के माध्यम से अपनी आराधना का शुभारम्भ किया | यह भी एक अत्यंत आश्चर्यजनक और महत्वपूर्ण तथ्य है कि उस समयावधि के पूर्ववर्ती अधिकतर संत एक आसन पर बैठकर दिन-रात माला-जप करते हुए 'श्रीराधामाधव की अष्टायाम-लीला' का चिंतन करते हुए अपनी साधना किया करते थे परन्तु श्रीबाबामहाराज ने पूर्व परम्परा से चली आ रही

ब्रज के संतों की इस साधना से हटकर 'संगीत मयी आराधना' की जो आधारशिला रखी, वह बहुत बड़ा क्रान्तिकारी कदम था | श्रीबाबा महाराज ने मानमन्दिर में थोड़े से स्थानीय ब्रजवासियों को साथ लेकर संकीर्तन करना आरम्भ किया | उस समय गाँव के ब्रजवासी दिन भर अपने खेतों में हल-बैल के साथ कठोर परिश्रम द्वारा कृषि-कार्य करते थे और रात में वे मानमन्दिर में श्रीबाबामहाराज की प्रेरणा से कीर्तन करने के लिए आते थे | श्रीमानमन्दिर पर थोड़े-से ब्रजवासियों को साथ लेकर संकीर्तन के माध्यम से श्रीबाबा के द्वारा ये अनूठी 'संगीत -साधना' का शुभारम्भ था; उस समय ढोलक, ताशे और बेला तथा झाँझ-करताल की तुमुल ध्वनि के साथ रात में कीर्तन होता था, बीच में एक रासमण्डल पर श्रीबाबामहाराज घंटों तक आवेश के साथ नृत्य किया करते थे और उनके चारों ओर ब्रजवासी भक्त कीर्तन करते हुए घूमा करते थे | कई ब्रजवासी जोर-जोर से उछलकर हनुमत-पद्धति के अनुसार नृत्य किया करते थे; यह संकीर्तन मध्य रात्रि तक चलता था; उस संकीर्तन में ढोलक, ताशों, बेला आदि वाद्ययंत्रों की ध्वनि इतनी तीव्र होती थी कि बरसाने से १८ किलोमीटर दूर स्थित नीम गाँव तक इनकी आवाज सुनायी पड़ती थी | इस कीर्तन का कुछ स्थानीय साधकों ने बहुत विरोध किया, कुछ विरोधी पक्ष के लोगों ने श्रीबाबा के विरुद्ध झूठे आरोप लगाये, यहाँ तक कि इस कीर्तन को रुकवाने के लिए थाने में पुलिस के पास लोग पहुँचे | मानमन्दिर पर पुलिस भी आई परन्तु एक सिद्ध संत-महापुरुष के द्वारा आरम्भ की हुई इस आराधना को कोई भी बाधा रोक नहीं सकी | इस संगीत मयी संकीर्तन-आराधना का चमत्कार यह हुआ कि मानमन्दिर से चोर-डाकू भाग गये, भूत-प्रेतों की बाधा समाप्त हो गयी और सर्पों का आवागमन भी बन्द हो गया | ब्रज में बाबाश्री के आगमन से कई सौ वर्ष पूर्व तक संतों की साधना की यह शैली थी कि वे अपनी कुटिया में कठोर वैराग्यपूर्ण जीवन व्यतीत करते हुए मधुकरी वृत्ति के द्वारा जीवन-यापन करते हुए प्रभात से रात्रि तक एक आसन पर बैठकर जप व राधामाधव की अष्टयाम-लीला का चिंतन इत्यादि करते थे; श्रीबाबामहाराज ने इस परम्परा से अलग हटकर संगीत के माध्यम से 'नृत्यगानमयी आराधना' की आधारशिला रखी, जो वास्तव में ब्रज की यथार्थ रसोपासना थी और श्रीचैतन्यमहाप्रभुजी, महाप्रभु वल्लभाचार्यजी, स्वामीहरिदासजी और मीराबाई जैसी प्रेमाराधिकाओं द्वारा समर्थित थी | ब्रज में श्रीबाबा द्वारा अपने समकालीन और पूर्ववर्ती संतों की अपेक्षा आराधना के क्षेत्र में उठाया गया यह अभूतपूर्व प्रयास था इसीलिए प्रारम्भ में इसकी महिमा को न जानने के कारण कुछ साधुओं-वैष्णवों ने इसका बहुत विरोध किया परन्तु श्रीबाबामहाराज अपने कदम से एक पग भी पीछे नहीं हटे और आज तो श्रीबाबा द्वारा प्रारम्भ की गयी इस आराधना ने बहुत ही विशाल रूप धारण कर लिया है | सन् १९८८ में श्रीबाबा द्वारा पहली बार ब्रज चौरासी कोस की निःशुल्क यात्रा का शुभारम्भ किया गया | इस यात्रा में चौबीस घंटे संगीत की रसधारा चालीस दिनों तक प्रवाहित होती रहती है | श्रीबाबा ने शास्त्रीय संगीत पर आधारित विभिन्न रागों में सैकड़ों युगलमन्त्र-कीर्तन की धुनों की रचना की है | कीर्तन की ये धुनें देश-विदेश में बहुत अधिक लोकप्रिय हुई हैं और श्रीराधारानी ब्रजयात्रा में तो चालीस दिनों तक अनवरत् इन धुनों का गायन होता रहता है | संगीत मयी शैली में सतत् गायन, वादन और नृत्य का परमाद्भुत प्रदर्शन होता है श्रीमानमन्दिर द्वारा संचालित इस ब्रजयात्रा में | चालीस दिनों तक सम्पूर्ण देश के सुदूर क्षेत्रों से पधारे ब्रजयात्री निरन्तर संप्रवाहित होती हुई संगीत की रसधारा में पूर्णतया ऐसे निमग्न रहते हैं कि उन्हें यात्रा की थकावट का भी अनुभव नहीं होता और चालीस दिन एक क्षण के समान कैसे व्यतीत होते हैं, इसका भी पता नहीं चलता | प्रायः अन्यत्र ब्रज-परिक्रमाओं में शुल्क भी बहुत लिया जाता है और उन यात्राओं में संगीत पर आधारित 'रसमय संकीर्तन' का कोई प्रबंध नहीं होता; अतः सब भौतिक सुविधाओं से युक्त होने पर भी वे यात्रायें नीरस ही रहतीं हैं |

'श्रीमानमन्दिर की राधारानी ब्रजयात्रा' में सतत् संकीर्तन (नृत्य-गान) का योग होने से ही इस समय यह विश्व की सबसे बड़ी पदयात्रा बन गयी है, जिसमें देश-विदेश से पंद्रह हजार से भी अधिक यात्री प्रतिवर्ष निःशुल्क ब्रज-परिक्रमा का लाभ उठाते हैं |

इसके अतिरिक्त वर्तमानकाल में श्रीबाबामहाराज द्वारा आरम्भ की गयी 'नित्य संगीत मयी आराधना' में अनेकों आराधिकाओं के सम्मिलित होने से तो गह्वरवन स्थित आराधना-भवन 'रस मण्डप' में प्रतिदिन भक्तों को दिव्य महारास की एक झलक का दर्शन होता है | मानमंदिर के गह्वरवन स्थित आध्यात्मिक आवास स्थल 'रस कुंज' में लगभग सवा सौ कन्यायें श्रीबाबामहाराज के मार्गदर्शन में भुक्ति-मुक्ति की समस्त कामनाओं से मुक्त समस्त लौकिक बन्धनों को तिलांजलि देकर पूर्ण संयम के साथ आराधनामय जीवन व्यतीत कर रहीं हैं | श्रीबाबामहाराज किसी को भी अपना शिष्य अथवा शिष्य नहीं बनाते हैं, अतः ये साध्वियाँ श्रीबाबामहाराज की शिष्यायें तो नहीं हैं परन्तु आध्यात्मिक जीवन की खोज में 'पुरुष अथवा स्त्री' कोई भी मानगढ़ पर आता है तो महाराजश्री सबको समान रूप से इस रसमयी भक्ति का अवसर प्रदान करते हैं | विशुद्ध भक्ति के सम्बन्ध में 'बाबाश्री' स्त्री-पुरुष के भेद को स्वीकार नहीं करते | भारतवर्ष में यह अत्यधिक दुःखद स्थिति है कि कन्याओं को पूर्णरूपेण निष्काम भाव से आध्यात्मिक जीवन व्यतीत करने का शुभ अवसर प्रदान करने हेतु अलग से कोई आश्रम अथवा आध्यात्मिक संस्था नहीं है | इसीलिए श्रीबाबामहाराज ने सम्पूर्ण रूप से (सर्वात्मभाव से एकमात्र) भक्तिमार्ग का चयन करने वाली कन्याओं को यह अद्भुत अवसर प्रदान किया है और उसका सबसे प्रमुख माध्यम है - संगीत मयी आराधना |

श्रीबाबामहाराज प्रतिदिन संध्याकालीन 'आराधना' में रसमण्डप-भवन में शास्त्रीय संगीत पर आधारित 'महापुरुषों के पदों' का गायन करते हैं और उनके इस पद-गायन में लगभग सवा-डेढ़ सौ 'आराधिकाएँ' घण्टों तक नृत्य करतीं हैं | नृत्य-गानमयी इस अलौकिक 'रसाराधना' के दर्शन से श्रद्धालुओं को सहज ही द्वापर कालीन श्रीराधामाधव की दिव्यातिदिव्य 'महारास-लीला' की स्मृति हो आती है | संकीर्ण मानसिकता से ग्रसित जो लोग महाराजश्री के निर्देशन में कन्याओं द्वारा की गयी इस लोकातीत आराधना के महत्त्व को नहीं समझ सके, उन्होंने व्यर्थ ही इसका विरोध करने का प्रयास किया और इसको रुकवाने के लिए प्रशासन से सम्पर्क किया, इसका परिणाम यह हुआ कि मथुरा से डी. एम. ने 'रस-कुंज' की बिल्डिंग को तोड़ने का आदेश पारित कर दिया | श्रीबाबामहाराज को इसकी सूचना मिलने पर उन्होंने कहा कि इस स्थान पर भगवान् की आराधना होती है, कोई पाप नहीं होता, अतः ब्रह्मा भी इस इमारत को नहीं तोड़ सकते | श्रीबाबामहाराज के वचन पूर्णतया सत्य सिद्ध हुए और डी. एम. का 'रस कुंज भवन को तोड़ने का' आदेश निरर्थक सिद्ध हुआ अपितु अब तो 'रस कुंज की इमारत' से भी कई गुना विशाल आराधना-भवन 'रस मण्डप' का निर्माण हो चुका है, जहाँ पूर्णतया निर्विघ्न रूप से 'संकीर्तन-आराधना' प्रतिदिन होती है | इस 'संकीर्तन-आराधना' के माध्यम से ही श्रीबाबामहाराज के द्वारा धाम सेवा और गौ-सेवा के बड़े-बड़े कार्य निष्काम भाव से सफलतापूर्वक सम्पादित किये जाते हैं | मानमन्दिर की श्रीमाताजी गौशाला में लगभग साठ हजार गौवंश का पालन हो रहा है, उनकी सेवा में प्रतिदिन तीस लाख रुपये व्यय होते हैं किन्तु यह सब कार्य बिना किसी से कुछ माँगे, निष्काम भाव से सहज में ही पूर्ण हो जाता है तो इसका भी मुख्य कारण है यहाँ की संध्याकालीन नित्य 'संकीर्तन-आराधना'; यह संकीर्तन-आराधना और अधिक रसमयी बने, इस उद्देश्य से श्रीबाबामहाराज द्वारा मानमन्दिर में 'श्रीराधा संगीत महाविद्यालय' की स्थापना की गई है | इसमें मुख्य रूप से आराधना में सम्मिलित होने वाली बालिकाओं को विभिन्न प्रकार के वाद्ययन्त्र बजाने का प्रक्षिक्षण दिया जा रहा है | बिना कहे ही सहज भाव से भारतवर्ष के कई विशिष्ट संगीत ज्ञ इन दिव्य

बालिकाओं को निःशुल्क ही गायन और वाद्य बजाने की शिक्षा दे रहे हैं |

श्रीबाबामहाराज स्वयं ही भारत के एक विशिष्ट संगीत ज्ञ हैं, अपनी जन्मभूमि प्रयाग में बचपन से ही घर पर ही अपनी बड़ी दीदीजी के द्वारा श्रीबाबा को संगीत का प्रथम प्रशिक्षण मिला; उन्होंने 'बाबाश्री' को हारमोनियम बजाना सिखाया | श्रीबाबा इतने अधिक प्रतिभाशाली थे कि थोड़े ही समय में वे हारमोनियम बजाने में निपुण हो गये | अपने छोटे भाई की संगीत प्रतिभा को पहचानकर दीदीजी ने 'बाबाश्री' को 'प्रयाग संगीत समिति' में प्रवेश दिलवाकर कुशल संगीत प्रशिक्षकों के द्वारा संगीत की शिक्षा दिलवाई | वहाँ पहुँचकर तो श्रीबाबा दिन-प्रतिदिन संगीत की विविध कलाओं में पारंगत होते चले गये | श्रीबाबा को विभिन्न संगीत प्रतियोगिताओं में अनेकों पुरस्कार तथा स्वर्ण पदक की प्राप्ति हुई | उन्होंने तत्कालीन भारत के प्रमुख संगीत सम्राट 'श्रीविष्णुदिगम्बरजी' के सुपुत्र महान संगीत ज्ञ श्री डी. वी. पलुस्करजी के साथ भी एक संगीत - समारोह में मंच पर गायन प्रस्तुत किया |

एक बार श्रीबाबा को उनके एक संगीत के गुरुजी ने 'प्रयाग संगीत समिति' में सरस्वती जी के एक चित्र का दर्शन कराते हुए कहा – 'इस चित्र को ध्यान से देखो, सरस्वतीजी के चार हाथ हैं | उनके एक हाथ में तो जप-माला है, एक हाथ में पुस्तक है परन्तु उनके दोनों हाथों में वीणा है; इसका यही अभिप्राय है कि कोई माला लेकर भजन कर ले, पुस्तक के माध्यम से शास्त्र का ज्ञान भी प्राप्त कर ले किन्तु जब तक वह संगीत -कला का अभ्यास नहीं करेगा तब तक उसकी आध्यात्मिक साधना अधूरी ही बनी रहेगी अर्थात् जीवन में नीरसता ही बनी रहेगी; इसीलिए सरस्वतीजी वीणा को दोनों हाथों से धारण किये रहतीं हैं |'

वास्तव में भजन, उपासना या आध्यात्मिक साधना में जब तक मन को रस की प्राप्ति नहीं होती तब तक साधक का साधन ऊपरी तौर पर ही चलता है | इसलिए 'श्रीइष्ट में मन का सहज सतत संयोग हो' इसके लिए सरस साधन 'संगीत' की परमावश्यकता है |

तभी तो 'श्रीगीताजी १२/८' में भी श्रीभगवान् ने अर्जुन से कहा – **'मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय |'**
मन को मुझमें लगा तथा बुद्धि को भी मुझमें लगा | इसी प्रकार दो अन्य अध्यायों में भी भगवान् ने कहा – **मन्मना भव** – अर्थात् मन को मुझमें लगाओ | इसी तरह संत कबीर दास जी ने भी अपने एक पद में कहा है –

माला फेरत जुग भया गया न मन का फेर |
कर का मनका डार के मन का मनका फेर || माला फेरते युग बीत गये परन्तु अभी तक मन के विकार ज्यों के त्यों बने हुए हैं इसलिए हे साधकों ! हाथ की माला छोड़कर मन की माला फेरो |

मन का साधन या भजन से संयोग तभी होता है जब उस साधन में रस हो और जब तक भजन में रस की प्राप्ति नहीं होती, मन इधर-उधर संसार के विषयों में भटकता रहता है | उपनिषदों ने भी रस को ही भगवान् का स्वरूप बताया है - **"रसो वै सः | रसं ह्येवायं लब्ध्वा आनन्दी भवति |"**
वह परम पुरुष भगवान् ही साक्षात् रसस्वरूप है और उस रस को पाकर ही यह जीव 'आनन्द' की प्राप्ति करता है |

इसलिए अध्यात्म पथ के पथिक साधक को ऐसा साधन करना चाहिए जिसमें 'रस' की प्राप्ति हो और देखा जाए तो 'संगीत ' ही एक ऐसा माध्यम है जिसको अपनी साधना से जोड़ने पर स्वाभाविक, सहज ही 'रस' की प्राप्ति होती है | संगीत की त्रिवेणी 'गायन, वादन और नृत्य' से जुड़ने पर ही हमारा साधन रसमय हो सकता है और तभी हमारा मन भी रस को प्राप्त करके धीरे–धीरे विषयों के कल्मष से मुक्त हो भगवान् का संस्पर्श प्राप्त कर सकता है | इसी बात को ध्यान में रखते हुए श्रीबाबा महाराज द्वारा मानमन्दिर पर 'श्रीराधा संगीत महाविद्यालय' की स्थापना की गयी है और ऐसा प्रयास किया जा रहा है कि संध्याकालीन आराधना को और अधिक रसमय बनाने के लिए उसमें विभिन्न प्रकार के वाद्यों का वादन किया जाए | इसी उद्देश्य से आराधना में सम्मिलित होने वाली

आराधिकाओं को संगीत के विशेषज्ञों के द्वारा विभिन्न वाद्ययंत्रों के वादन का प्रशिक्षण दिलाया जा रहा है | बाबाश्री का यह भी कहना है कि संगीत की सरिता के दो प्रवाह हैं – एक तो सीधा और दूसरा उल्टा; उल्टा प्रवाह यह है कि इसमें 'संगीत ' का प्रयोग मनुष्य धन का अर्जन और विषय भोगों की प्राप्ति में करता है, उदाहरण के तौर पर फ़िल्मी दुनिया में 'संगीत' के बड़े-बड़े कलाकार हैं, गायन और वादन की कला में वे पूर्ण कुशल हैं परन्तु एक-एक गीत का गायन करने वाले और उसमें संगीत की प्रस्तुति करने वाले कलाकार लाखों रुपये लेते हैं; इस तरह उनके द्वारा धन और विषय भोग की लोलुपता से संगीत को दूषित कर दिया जाता है; यही है 'संगीत की सरिता का उल्टा प्रवाह' | इस 'संगीत-सरिता' का सीधा प्रवाह यह है जैसा कि भगवान् के भक्त संगीत का उपयोग निष्काम भाव से केवल भगवान् की आराधना के लिए करते हैं, वे अपनी संगीत मयी आराधना का प्रयोग केवल भगवान् को प्रसन्न करने के लिए करते हैं न कि लोक-रंजन के लिए |

श्रीमानमन्दिर पर विराजमान श्रीबाबामहाराज विगत ७० वर्षों से निष्काम भाव से केवल श्रीराधामाधव की आराधना के लिए ही संगीत -कला का उपयोग करते आये हैं और इसे जन-जन में लोकप्रिय बनाने के लिए मानमन्दिर में आरम्भ से ही श्रीबाबा द्वारा हारमोनियम और ढोलक बजाने का सभी को प्रशिक्षण दिया जाता रहा है और अब उसी श्रृंखला में 'श्रीराधा संगीत महाविद्यालय' की स्थापना के द्वारा भी गायन-शैली में और अधिक निखार व सरसता लाने के लिए अनेक प्रकार के वाद्यों के वादन का प्रशिक्षण दिया जा रहा है, जिससे कि हमारी आराधना और अधिक रसमयी बने और जीवों को सहज ही विषय-आसक्ति के बन्धन से मुक्तकर भगवान् के सम्मुख ले जाने में सहायक सिद्ध हो सके |

बाबाश्री की हार्दिक इच्छा थी कि ऐसा संगीत-विद्यालय हो जो समस्त ब्रजवासीजनों को संगीतमयी सरस उपासना में रँग दे, क्योंकि ब्रजवासियों के रोम-रोम में संगीत (नृत्य-गान-वाद्य) समाया हुआ है, केवल आज आवश्यकता है उनकी इस छिपी हुई प्रतिभा को प्रकट करने की | (श्रीकृष्ण के अवतारकाल में ब्रजवासियों 'गोपी-ग्वालों' की प्रत्येक क्रिया 'संगीतमयी आराधना' से युक्त थी, इसी 'रसमय आराधन' के लिए ही श्रीश्यामसुन्दर ने समस्त ब्रज-लीलाएँ सुसम्पन्न की हैं |)

अतः कथनाशय है कि 'विशुद्ध संगीतमयी आराधना के महत्त्व व प्रभाव' का श्रीमानमंदिर की 'आराधिकाओं' द्वारा जन-जन में प्रचार-प्रसार हो, जिससे 'ब्रजभावभावित सरस-उपासना' में लोग अवगाहन कर सकें; इसी उद्देश्य से श्रीबाबामहाराज द्वारा **'श्रीराधा संगीत महाविद्यालय'** की संस्थापना हुई है, जो ब्रजमण्डल व विश्व का अनुपम व अलौकिक संगीत महाविद्यालय है, जहाँ निष्काम भाव से श्रीकृष्ण-संप्राप्ति के लिए ही इन धन्यातिधन्य दिव्यतम बालाराधिकाओं को संगीत की परम स्वामिनी श्रीजी की नित्य लीलास्थली श्रीगह्वरवन धाम में 'संगीतमयी शिक्षा' संप्राप्त हो रही है |

'श्री राधा संगीत महाविद्यालय' में संगीत सीख रहे विद्यार्थियों की सूची

वंशी	मृदंग	तबला	गायन	वायलिन
१. विरागा जी २. ललिता जी ३. सुभद्रा जी ४. पूजा जी ५. माधवीप्रिया जी ६. ब्रजरेणु जी ७. दिव्यांशी जी ८. राधा जी ९. मनसा जी १०.दिव्या जी ११.श्याम सखी जी १२. जया जी १३. कृष्णा जी १४. श्यामा जी १५. चतुरा जी १६. मधुबाला जी	१. दया जी २.मीरा जी ३. प्रीति जी ४. गोपाल प्रिया जी ५. सुनीता जी ६. सुगीता जी ७. श्याम जीवनी जी ८. प्रियेश्वरी जी ९. शैलजा जी १०. वृन्दावनी जी ११. गंगा जी १२.सारिका जी १३.कृष्ण प्रिया जी १४. अर्चना जी १५. शुभांगना जी १६. रास प्रिया जी १७. किशोरी प्रिया जी १८. करुणा जी १९. श्यामा जी २०. मधुरा जी २१. वंशी जी २२. चन्द्र मुखी जी २३. पद्माक्षी जी २४. श्री दासी जी	१. मधुवनी जी २. लक्ष्मी जी ३. गीता जी ४. शिवानी जी ५. ललिता जी ६. आराधना जी ७. बरसाना जी ८. विशाखा जी ९. प्रिया जी १०. ब्रजांगना जी ११. सोनी जी १२. दुर्गा जी १३. भावनी जी १४. विद्या जी १५. राधिका जी १६. मधुरांगना जी १७. यमुना जी १८.अचल प्रेमा जी १९. रासी जी २०. मुस्कान जी २१. नीशा जी २२.श्री कान्ता जी २३.कांचनी जी २४. पूजा जी २५. नीता जी २६. सुदेवी	१. सुदेवी जी २. रमा जी ३. माधवी जी ४. नवल श्री जी ५. प्रतीक्षा जी ६. क्षमा जी ७. ब्रजबाला जी ८. श्याम प्रिया जी ९. कोमल जी १०. कमल किशोरी जी ११. हरिगीता जी १२. अनुराधा जी १३. कृष्णा जी १४. वत्सला जी	१. श्रीजी २. तुंगविद्या जी ३. गोचारिका जी ४. गौरी जी ५. हेमा जी ६. माधुरी जी

रसोपासना का साक्षात् स्वरूप 'संगीत'

बाबाश्री के शब्दों में – "संगीत रूपी नदी के दो प्रवाह हैं – (१) सीधा प्रवाह – जो श्री कृष्ण से मिलाता है | (२) उल्टा प्रवाह – संसार में ले जाता है |"

जब 'संगीतमयी आराधना' पूर्णतः निष्काम भावपूर्वक श्रीइष्ट की प्रसन्नता के लिए की जाती है तो उससे अवश्य श्रीकृष्ण की संप्राप्ति होती है और यदि सांसारिक कामनाओं की पूर्ति के लक्ष्य से की जाती है तो भव-बंधन में फँसना पड़ता है | संगीतमय जीवन की भक्तिरस-धारा बिना किसी रुकावट के अबाध गति से एकरस संप्रवाहित होती रहे, इसके लिए नित्य-निरन्तर सत्संग की परमावश्यकता है; अतः 'सत्संग व संगीत ' का परस्पर प्रगाढ़ सम्बन्ध है | रसिक संत-महापुरुषों के संग से ही नृत्य-गान-वाद्य में सरसता आती है; 'विशुद्ध सत्संग' से विवेक व भावना-शक्ति की प्राप्ति होती है, जिससे स्वाभाविक ही निष्किञ्चन भाव से रसोपासना (संगीत मयी आराधना) के प्रति निरन्तर रुचि, लगन, उत्कंठा उत्पन्न होती रहती है अर्थात् सत्संग से ही संगीत-निष्ठा सुदृढ़ होती है; इसलिए 'सत्संग' से ही संगीत की पूर्णता है, इसके बिना 'भक्तिमय संगीत-यात्रा' सर्वथा असम्भव ही है | **"गीतं, वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीत मुच्यते |"**

(संगीत -रत्नाकर)

'गीत, वाद्य और नृत्य' ये तीनों मिलकर 'संगीत' कहलाते हैं | वास्तव में ये तीनों सरस कलाएँ (गाना, बजाना व नाचना) एक-दूसरे से स्वतन्त्र हैं किन्तु स्वतन्त्र होते हुए भी 'गान' के आधीन वादन और 'वादन' के आधीन नर्तन है; इन तीनों कलाओं का प्रयोग जब एक साथ होता है तो उसे 'संगीत' कहते हैं | 'संगीत' गीत शब्द में 'सम्' उपसर्ग लगाकर बना है | 'सम्' - सहित, 'गीत' – गान; गान के सहित अर्थात् अंगभूत क्रियाओं 'नृत्य एवं वादन' के साथ किया हुआ कार्य 'संगीत' कहलाता है |

नृत्यं वाद्यानुगं प्रोक्तं वाद्यं गीतानुवृत्ति च |
अतो गीत प्रधानत्वादत्राऽऽदावभिधीयते ||

(संगीत -रत्नाकर)

'गान' के आधीन वादन और 'वादन' के आधीन नर्तन है, अतः इन कलाओं में 'गान' को ही प्रधानता दी गई है |

संगीत में काम आने वाली वह आवाज जो मधुर हो अर्थात् कानों को अच्छी लगे और जिसे सुनकर चित्त प्रसन्न हो, 'स्वर' कहलाती है; सात शुद्ध स्वर चुने गए हैं – १. षड्ज 'सा' २. ऋषभ 'रे' ३. गान्धार 'ग' ४. मध्यम 'म' ५. पंचम 'प' ६. धैवत 'ध' ७. निषाद 'नि' |

संगीत का आविर्भाव –

'संगीत-कला' की उत्पत्ति के विषय में विद्वज्जनों के विभिन्न मत हैं, जिनमें से कुछ मत इस प्रकार हैं –

(१) संगीत की उत्पत्ति आरम्भ में वेदों के निर्माता ब्रह्माजी द्वारा हुई | ब्रह्माजी ने यह कला शिवजी को दी और शिव के द्वारा देवी सरस्वती को प्राप्त हुई | सरस्वतीजी को इसलिए 'वीणा-पुस्तक-धारिणी' कहकर संगीत और साहित्य की अधिष्ठात्री माना है | सरस्वतीजी संगीत-कला का ज्ञान नारदजी को प्राप्त हुआ | नारदजी ने स्वर्ग के गन्धर्व, किन्नर एवं अप्सराओं को संगीत-शिक्षा दी | भरतमुनि, नारदजी, हनुमानजी इत्यादि ऋषिजन संगीत-कला में पारंगत होकर भू-लोक पर संगीत -कला के प्रचारार्थ अवतीर्ण हुए |

(२) 'संगीत-दर्पण' के लेखक श्रीदामोदर पण्डितजी (सन् १६२५) के मतानुसार भी 'संगीत' की उत्पत्ति ब्रह्माजी से ही आरम्भ होती है; उन्होंने लिखा है –

द्रुहिणेत यदन्विष्टं प्रयुक्तं भरते न च |
महादेवस्य पुरतस्तन्मार्गाख्यं विमुक्तदम् ||

अर्थात् ब्रह्माजी ने जिस संगीत को शोधकर निकाला, भरतमुनि ने महादेवजी के सामने जिसका प्रयोग किया तथा जो भव-मुक्तिदायक है, वह 'मार्गी' संगीत कहलाता है | इस विवेचन से प्रथम मत का कुछ अंशों में समर्थन होता है; आगे चलकर इन्हीं पण्डितजी ने सात स्वरों की उत्पत्ति पक्षियों द्वारा इस प्रकार बताई है –

मोर से षड्ज, चातक से ऋषभ, बकरा से गान्धार, कौवा से मध्यम, कोयल से पञ्चम, मेढक से धैवत और हाथी से निषाद स्वर की उत्पत्ति हुई |

साधना से ही संगीत-सिद्धि

संगीत-साधना की विधि में सर्वप्रथम षड्ज (सा) के अभ्यास द्वारा गले को साधा जाता है | पं. माणिक बुआ ठाकुरदास का कथन है – 'यह षड्ज कानों तथा मस्तिष्क में पूर्णतः भर जाने से इतना आनन्द देता है कि आपको दूसरा स्वर लगाने की इच्छा नहीं होगी | षड्ज की पूर्णावस्था से प्रत्येक स्वर पूर्णावस्था में ही स्थिर रहेगा |' इसीलिये संगीत-कलाकार नियमित एवं निरन्तर कई घण्टे स्वर-साधना करते हैं; कितना भी बड़े से बड़ा कलाकार हो षड्ज-साधना उसकी दैनिक क्रिया में महत्त्वपूर्ण तथा अनिवार्य अंग होती है |

प्रत्येक कला (नृत्य, गान, वाद्य इत्यादि) की सिद्धि के लिए नित्य-निरन्तर (लगातार कई घण्टों तक) अभ्यास करना परमावश्यक है | संगीत में अभ्यास करने के लिए सुस्थिर आसन, एकाग्रचित्तता, ब्रह्मचर्य द्वारा इन्द्रियों पर नियन्त्रण, शुद्ध-सात्त्विक युक्ताहार, भक्तिमय आचार-विचार इत्यादि अति आवश्यक है, इसी से ही संगीत-कला में वास्तविक निखार आता है |

गायन-पद्धति

ध्रुवपद – प्राचीनकाल में 'ध्रुवपद' में संस्कृत-श्लोकों को गाकर हमारे ऋषि-मुनि 'भगवान्' की आराधना करते थे; इसमें वीर, श्रृंगार और शान्त रस प्रधान है | ध्रुवपद में 'स्थायी, अन्तरा, संचारी और आभोग' ये चार भाग होते हैं | 'ध्रुवपद' अधिकतर चौताल, सूलफाक, झंपा, तीव्रा, ब्रह्मताल, रुद्रताल इत्यादि तालों में गाए जाते हैं |

खयाल – फारसी भाषा में खयाल का अर्थ है – विचार या कल्पना | राग के नियमों का पालन करते हुए अपनी इच्छा या कल्पना से विविध आलाप-तानों का विस्तार करते हुए एकताल, त्रिताल, झूमरा, आड़ा, चौताल इत्यादि तालों में गाते हैं |

होरी-धमार – जब होरी के पदों को 'धमार ताल' में गाते हैं, तो उसे 'धमार' कहा जाता है | धमार-गायन में प्रायः ब्रज की होली का वर्णन होता है |

गायकों के घराने

भारतीय संगीत -कला के प्राचीन गायकों में कुछ ऐसे प्रसिद्ध गायक हो गए हैं, जिन्होंने अपनी प्रतिभा से एक विशेष प्रकार की गायन-शैली को जन्म देकर, उसे अपने पुत्रों तथा शिष्यों को सिखाकर प्रचलित किया; उनकी उस शैली का अनुकरण उनके शिष्यगण तथा कुटुम्बी अब तक करते चले आ रहे हैं; उन गायन-शैलियों को ही घराने का नाम दिया जाता है | अनेक घरानों के राग-स्वर तो प्रायः एक-से ही हैं, किन्तु उनके गाने का या स्वरों को प्रयुक्त करने का ढंग अलग-अलग होने से ही यह कहा जाता है कि यह अमुक घराने की गायकी है |

गायकों के मुख्य पाँच घराने हैं – **(१) ग्वालियर-घराना –** 'जोरदार एवं खुली आवाज का गायन, ध्रुवपद-अंग के खयाल, सीधी तथा सपाट तानें, बोल-तानों में लयकारी, गमकों का प्रयोग' इत्यादि इस घराने की विशेषताएँ हैं |

(२) जयपुर-घराना – 'आवाज बनाने की अपनी स्वतन्त्र शैली, खुली आवाज में गायन, गीत की संक्षिप्त बन्दिश, वक्र तानें तथा आलाप की छोटी- छोटी तालों से बढ़त, खयाल-गायन की विशेष बन्दिश' इत्यादि विशेषताएँ हैं |

(३) किराना-घराना – 'स्वर लगाने का अपना एक विशेष ढंग, एक-एक स्वर को शनैः – शनैः आगे बढ़ाते हुए गायन, आलाप प्रधान गायकी, ठुमरी अंग' इत्यादि इस घराने की विशेषताएँ हैं |

(४) आगरा-घराना – 'नोमतोम में आलाप, बन्दिशदार चीजों का गायन, खुली और जोरदार आवाज, खयाल गायकी के साथ-साथ ध्रुवपद-धमार-गायन, बोल-तानों पर अधिकार' इत्यादि इस घराने की विशेषताएँ हैं |

(५) दिल्ली-घराना – "तान लेने की विचित्र पद्धतियाँ, द्रुत लय में तानों का प्रयोग, खयालों की कलापूर्ण बन्दिशें, ताल और लय पर अधिकार, 'तान, बन्धान' आदि में अकार का सही प्रयोग करना तथा उनके अवगुणों से

बचना, गायन के अंग में सुन्दर स्वरों का मेल करके कलात्मक अंगों का दिग्दर्शन" इत्यादि इस घराने की विशेषताएँ हैं |

वाद्ययन्त्र –

भारतीय वाद्यों को चार श्रेणियों में बाँटा गया है –

१. तन्तु वाद्य – इस श्रेणी के वाद्यों में तारों के द्वारा स्वरों की उत्पत्ति होती है, इनके भी दो प्रकार हैं – तत वाद्य, वितत वाद्य | 'तत वाद्यों' की श्रेणी में तार के वे साज आते हैं, जिन्हें मिजराब या अन्य किसी वस्तु की टङ्कोर देकर बजाते हैं; जैसे – वीणा, सितार, सरोद, तानपूरा, इकतारा, दुतारा इत्यादि |

'वितत वाद्यों' की श्रेणी में गज की सहायता से बजने वाले साज आते हैं, जैसे – इसराज, सारङ्गी, वायलिन इत्यादि |

२. सुषिर वाद्य – इस श्रेणी में फूँक या हवा से बजने वाले वाद्य आते हैं, जैसे – बाँसुरी, हारमोनियम, क्लारनेट, शहनाई, बीन एवं शंख इत्यादि |

३. अवनद्ध वाद्य – इस श्रेणी में चमड़े से मढ़े हुए ताल-वाद्य आते हैं, जैसे – मृदंग, तबला, ढोलक, खंजरी, नगाड़ा, डमरू और ढोल इत्यादि |

४. घन वाद्य – इस श्रेणी के वाद्यों में चोट या आघात से स्वर उत्पन्न होते हैं, जैसे – जलतरंग, मँजीरा, झाँझ, करताल, घंटातरंग और पियानो इत्यादि |

सितार – तेरहवीं-चौदहवीं शताब्दी में अलाउद्दीन खिलजी के दरबार में हजरत अमीर खुसरो एक प्रसिद्ध संगीत ज्ञ कवि हुए हैं, उन्होंने एक प्राचीन वीणा के आधार पर मध्यमादि वीणा बनाकर उसमें तीन तार चढ़ाए और उसका नाम 'सेहतार' रखा; फारसी में 'सेह' का अर्थ 'तीन' होता है, सम्भवतः इसी आधार पर उन्होंने इस वीणा का नामकरण 'सेहतार' किया, इसमें २ पीतल के तथा १ लोहे का तार था और १४ परदे थे | कहा जाता है कि १७१९ ई. में मुग़ल बादशाह मुहम्मद शाह के समय इस वाद्ययन्त्र में ३ तार और बढ़ाए गए, इस प्रकार ६ तार का होकर कुछ समय चलता रहा, बाद में इसमें १ तार और बढ़ाकर ७ तार हो गए |

तबला – तबला की प्रारम्भिक उत्पत्ति के विषय में विद्वानों के विभिन्न मत पाए जाते हैं किन्तु अधिकांश विद्वानों का ऐसा मत है कि अलाउद्दीन खिलजी के समय में अमीर खुसरो नामक संगीत ज्ञ ने 'पखावज' को बीच में से दो भागों में काटकर 'तबला' का आविष्कार किया | कहा जाता है कि 'तब्ल' नामक फारसी शब्द से तबला की उत्पत्ति हुई है | 'तब्ल' का अर्थ है – 'नक्कारा' | कुछ विद्वानों के मत से तबला के आविष्कर्त्ता दिल्ली के उ. सिद्धार खाँ ढाढ़ी थे |

मृदङ्ग (पखावज) – नटराज शंकर का डमरू सबसे प्राचीन घन-वाद्य है, उसी के आधार पर मृदंग की उत्पत्ति हुई | मृदंग की प्राचीनता का प्रमाण ऋग्वेद (५/३३/६) से मिलता है, जिसमें वीणा, मृदंग, वंशी और डमरू का वर्णन आया है | पुरातन काल में मृदंग को 'पुष्कर' भी कहा जाता था, ऐसा भरत-मत के ग्रन्थों में वर्णन मिलता है | 'पुष्कर वाद्य' देवताओं को अति प्रिय था, इसकी ताल के साथ-साथ उनका नृत्य हुआ करता था; इसका प्रमाण अनेक प्राचीन मूर्तियों तथा चित्रों द्वारा मिलता है | प्राचीन 'पुष्कर वाद्य' कई प्रकार के होते थे, जैसे – हरीतकी (हरड़ के आकार जैसा), जवाकृति (जव के आकार से मिलता-जुलता), गौपुच्छाकृति (गौ की पूँछ के निचले गुच्छे के समान) इत्यादि |

'पखावज, मुरज और मर्दल' ये नाम भी मृदंग के ही हैं; इस प्रकार के विभिन्न नाम और उनकी आकृतियों का वर्णन ग्रन्थों में मिलता है | 'मृदंग' का विशेष प्रचार दक्षिण-भारत में हुआ | कुछ समय बाद उत्तर-भारत के संगीत ज्ञों ने 'मृदंग' से मिलता-जुलता प्रकार बनाकर इसका नाम 'पखावज' रख लिया | 'पखावज' पर अनेक कठिन-कठिन तालों का प्रयोग हुआ करता था | ध्रुवपद, धमार, ब्रह्म, रुद्र, विष्णु, लक्ष्मी, सवारी इत्यादि तालें पखावज पर बजाई जाती हैं; किन्तु जबसे 'तबला' का आविष्कार हुआ, तबसे मृदंग (पखावज) का प्रचार बहुत कम हो गया;

फिर भी गुणीजन इसको महत्त्व देते हैं व इसका बहुत सम्मान करते हैं |

प्रसिद्ध पखावजियों में 'ला. भवानीप्रसादसिंह पखावजी' को 'भातखण्डेजी' ने अप्रतिम पखावजी कहकर सम्बोधित किया था; प्रसिद्ध पखावजी कुदऊसिंह इन्हीं के शिष्य थे; औंध के नवाब द्वारा उन्हें 'कुँवरदास' की पदवी प्राप्त हुई थी |

तानपूरा – गायकों के लिए तानपूरा (तम्बूरा) एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण तार-वाद्य है, इसमें किसी गाने की सरगम नहीं निकलती, केवल स्वर देने के लिए ही इसका प्रयोग किया जाता है | 'गायक' अपने गले के धर्मानुसार इसमें अपना स्वर कायम कर लेते हैं और फिर इसकी झंकार के सहारे उनका गायन चलता रहता है |

वायलिन (बेला) – वायलिन या बेला की उत्पत्ति व आविष्कार के बारे में विभिन्न मत पाए जाते हैं |

एक मत के अनुसार बेला (वायलिन) को मूल रूप में भारतीय यन्त्र कहा जाता है | इस मत के अनुयायियों का कहना है कि लंकापति रावण ने एक तार वाला वाद्य-यन्त्र ईजाद किया, उसे गज से ही बजाया जाता था और उसका नाम 'रावणास्त्रम्' रखा गया | इसके पश्चात् ११ वीं शताब्दी के अन्त में भारत होकर परशिया, अरेबिया तथा स्पेन होता हुआ यह यन्त्र यूरोप पहुँचा, यहाँ पर इसमें परिवर्तन करके वर्तमान वायलिन के रूप में इसका विकास किया गया; भारतवर्ष में इसका प्रचार दिनों-दिन बढ़ रहा है, अच्छे बेला-वादक भी अब कई हो गए हैं |

बाँसुरी – यह भारतवर्ष का अति प्राचीन फूँक का वाद्य है | भगवान् श्रीकृष्ण ने अपने अधरों से लगाकर इसे अमरत्व प्रदान कर दिया है | आजकल बाँसुरियाँ कई प्रकार की मिलती हैं किन्तु ६ सुराख वाली बाँसुरी (जिसकी अँग्रेजी ढंग पर ट्यून की हुई होती है) सर्वाधिक प्रसिद्ध है | यद्यपि देशी बाँसुरी भी काफी प्रचलित है परन्तु उसे अच्छे स्वर-ज्ञान वाले ही पहचान सकते हैं कि इसकी ट्यून ठीक है या नहीं | बहुत से कलाकार बाँस की बाँसुरी अपने लिए स्वयं बना लेते हैं लेकिन सभी के लिए तो ऐसा करना असम्भव है, इसलिए ६ सुराख (छिद्र) वाली बाँसुरी सहज ही सर्वसुलभ है |

देखो गह्वर वन कुंजन, मनमोहन वंशी बजा रहा |
श्री राधा राधा श्री राधा, मुरली में धुन सुना रहा ||
मीठी तान सुरीली लेकर, गूँज हृदय में मचा रहा |
गुन गभीर वृषभानु सुता का, चित्त अचञ्चल चुरा रहा ||

संस्कार व संस्कृति का आधार 'संगीत'

जब-जब हमारी 'संस्कृति' का ह्रास हुआ, तब-तब 'संगीत' ने ही भक्ति-आन्दोलन के माध्यम से पुनर्विकास किया; भक्तिमय संगीत (संकीर्तनाराधन) ने ही सांसारिक कुरीतियों व बाधाओं को विनष्ट कर सद्भावनाओं की सुगन्ध फैलाई | 'संगीत' मानव-मन की मलिनताओं व विकृतियों को धो डालता है | सामजिक व सांस्कृतिक विकास में जो योगदान संगीत के आध्यात्मिक एवं दार्शनिक पक्ष का रहा है, उतना किसी और का नहीं | समाज व संस्कृति का उत्थान तथा विकास 'भारतीय संगीत' में ही दिखाई देता है क्योंकि 'संगीतमयी सरस आराधना' ही सभी प्रकार के विघ्नों का विनाश करती है | वस्तुतः 'संगीत कला व आत्मा' एक-दूसरे में प्रतिविम्बित होते हैं अर्थात् संगीत 'परमात्मा' से एकाकार कराता है; 'संगीत ' से सहज ही 'श्रीभगवान्' की संप्राप्ति हो जाती है | 'संगीत' भावना प्रधान कला है, इसलिए साधारण लोक शिक्षा से लेकर उच्चतम ज्ञान तक को प्रसारित करने में विशेष सहायक सिद्ध हुआ है |

भारतीय संस्कृति के विकास का इतिहास ही भारतीय संगीत का इतिहास है, जिस प्रकार संस्कृति में विभिन्न मानव-धर्मों, अध्यात्म तथा दर्शन का स्वरूप दिखाई देता है, उसी प्रकार भारतीय संगीत में भी इन सभी तत्त्वों का समावेश मिलता है | सुप्रसिद्ध दार्शनिक डॉ. राधाकृष्णन का कथन है – "संगीत किसी भी संस्कृति एवं सभ्यता की आत्मा है |" संगीत में अन्य विशेषताओं के अतिरिक्त अध्यात्म तथा दर्शन के तत्त्वों की उपस्थिति उसे समस्त विश्व में अनुपम, अनूठी विशिष्टता प्रदान करती है | श्रीभगवद्भक्ति का सबसे सरस साधन 'संगीतमय आराधन' ही है, इसलिए 'संगीत' का आध्यात्मिक समाज में सर्वाधिक विशेष व सर्वसम्मानीय स्थान है | सनातन धर्म-संस्कृति की जन्मदात्री 'भारतभूमि' संगीतमयी आराधना की ही विशेष स्थली है, अनादिकाल से जहाँ की रसोपासना से साक्षात् श्रीभगवान् व भक्तजनों का अवतरण होता रहता है |

'संगीत' मानव-मात्र के लिए नितान्त आवश्यक है | पाषाण-हृदय वाले भावहीन लोग भी संगीत सुनकर सहज ही द्रवित हो जाते हैं अर्थात् नीरस अन्तःकरण भी सरस हो जाता है; अतः 'संगीत' में एक विशेष ही परमाद्भुत रसदायिनी शक्ति सन्निहित है, जो घोर नास्तिक को भी आस्तिक बना देती है | 'मल्हार राग के गाने से वर्षा करा देना, दीपक राग द्वारा दीपक को जला देना, सुस्वर-गान के प्रभाव से हिरन को पास बुला लेना' इत्यादि संगीत-शक्ति के सहज चमत्कार हैं | ग्रीक साहित्य में ओरफेन्स का वर्णन मिलता है कि जो संगीत के प्रभाव से चराचर जगत को हिला देता था एवं समुद्र की उत्ताल तरंगों को शान्त कर देता था | चीन के प्रमुख समाचार पत्र 'पीपुल्स डेली' की एक रिपोर्ट में कहा गया है कि 'तैय आन' के एक डेरी फार्म में कोमल और हल्के 'संगीत' का आयोजन करने से 'गायें' अधिक दूध देने लगी हैं | भारतीय संगीत के आचार्य पं. ओंकारनाथ ठाकुर ने लखनऊ के चिड़ियाघर में शेर जैसे हिंसक पशु पर एक प्रयोग किया था – शेर के निकट जाने पर उसका हिंसक भाव स्पष्ट परिलक्षित हो रहा था किन्तु 'कोमल गान्धार' के विशिष्ट प्रयोग द्वारा उसकी आँखों में कुछ ही देर बाद परिवर्तन आ गया, वह अपनी पूँछ हिलाकर आँखों से वात्सल्य भाव प्रकट करने लगा |दक्षिण की प्रसिद्ध अन्नामलाई यूनिवर्सिटी में बाटनी विभाग के कुछ छात्रों ने संगीत द्वारा पौधों पर अद्भुत प्रभाव डाला | डॉ. जे. पाल ने अपनी 'संगीत चिकित्सा' पुस्तक में संगीत के विविध रागों द्वारा विभिन्न बीमारियों के उपचार करने का विस्तृत वर्णन किया है | मानव-स्वास्थ्य के लिए 'संगीत' सर्वश्रेष्ठ औषधि व सर्वोत्तम उपकरण है | संगीत के स्वर, लय, बोल और उनके संयोजन में ऐसे तत्त्व निहित हैं जिनके द्वारा प्रत्येक रोग की सम्भव है, अतः मानव जीवन का द्वितीय नाम 'संगीत' है |

संगीत-पथ प्रदर्शक संत

श्रीग्वारिया बाबा :-

उत्तरप्रदेश में बुन्देलखण्ड के एक भक्त विप्र-परिवार में ग्वारिया बाबा का जन्म लगभग सन् १८४३ के आसपास हुआ था | बाल्यावस्था से ही इनमें संसार से स्वाभाविक वैराग्य था तथा दिनों-दिन श्रीभगवत्प्रेम बढ़ता जा रहा था, इसलिए किशोरावस्था में ही दुःखद संसार (भवाग्नि) की भीषणता से बचकर जंगलों में भाग निकले और प्रबल श्रीकृष्णानुराग के कारण वन-वनान्तरों (गिरि-कन्दराओं आदि) में श्रीइष्ट-दर्शन की उत्कट उत्कण्ठा में भ्रमण करते हुए अन्वेषण करते रहते | श्रीश्यामसुन्दर में सख्य भाव होने के कारण बाबा उन्हें 'यार' कहते थे |

अपने यार की याद में घूमते-घूमते 'दतिया' पहुँचे | ग्वारिया बाबा को संगीत में सर्वाधिक प्रेम था, वे स्वयं भी एक बहुत बड़े संगीतज्ञ थे | एक बार बाबा को 'नाद-सिन्धु का साक्षात्कार' प्राप्त करने की लगन लगी, जिसके कारण वे दतिया से चलकर समीपवर्ती पहाड़ी जंगलों में निवासकर तीन साल तक घोर तपमय आराधन किया, जिसके फलस्वरूप संगीत की अधिष्ठात्री देवी की कृपा से उनकी अभिलाषा पूर्ण हुई; नाद-सिन्धु का दर्शन प्राप्त कर वे वृन्दावन चले आये, वहाँ रास-मण्डलियों के स्वरूपों तथा अन्य लोगों को संगीत की शिक्षा देकर संगीत का प्रचार-प्रसार करते रहे | संगीताचार्य के रूप में उनकी प्रसिद्धि चारों ओर दूर-दूर तक फैल गई; बड़े-बड़े संगीतज्ञ संगीत-शास्त्र की गुत्थियों को सुलझाने के लिए उनके पास आने लगे | एक बार श्रीग्वारिया बाबा के पास भारत के संगीत- सम्राट 'श्रीविष्णु दिगम्बरजी' आये, उस समय वे यमुना तट पर बैठे यार (श्यामसुन्दर) की मधुर लीलाओं के चिन्तन में निमग्न थे | बाह्यानुसन्धान होने पर जब उन्होंने आँखें खोलीं, तब विष्णुदिगम्बरजी ने उनके चरणों में साष्टांग प्रणाम कर विनीत भाव से कहा –

"महाराजजी ! एक पद की सरगम समझ में नहीं आ रही है, बहुत प्रयास किया, आप कृपा करें ... |"

ग्वारिया बाबा ने सहज भाव से कहा – "पद बोलो |"

दिगम्बरजी पद कहने लगे ....; उसी क्षण बाबा ने बालुका में सरगम लिख दिया | विष्णु दिगम्बर जी को यह देखकर आश्चर्य हुआ और प्रसन्नता भी, वे समझ गए कि उनकी त्रुटि कहाँ थी ? फिर वे ग्वारिया बाबा के श्रीइष्ट-प्रेम व उनकी संगीत-कुशलता की सहजवृत्ति को स्मरण कर अनुक्षण नमन करते हुए चले गये ....|

श्रीग्वारिया बाबा का 'संगीत-प्रेम' उनके 'कृष्ण-प्रेम' का ही परिणाम था, जो जिसका चिन्तन-आराधन करता है, वह वैसा ही बन जाता है, आराध्य के गुणों का ही उसमें आविर्भाव होने लगता है | ग्वारिया बाबा जिसका स्मरण-ध्यान करते थे, वह नंदगाँव का ग्वारिया (श्रीकृष्ण) है, इसलिए बाबा की वेश-भूषा, रहन-सहन, बोलचाल सब ब्रजवासी ग्वारिये जैसे ही हो गये थे, अतः ब्रजवासी लोग उन्हें 'ग्वारिया बाबा' कहने लग गये थे |

श्रीग्वारिया बाबा के प्रेमास्पद (श्रीश्याम) अलौकिक संगीत-प्रेमी होने से इनमें भी संगीतमय सभी सद्गुण सहज ही आ गये थे ....| 'बरसाने के किशोरीलाल गोस्वामी व मथुरा के चन्दन चौबे' ग्वारिया बाबा के ही शिष्य थे |

बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर :-

'बालकृष्ण बुआ इचलकरंजीकर' अखिल भारतीय संगीत कला कोविदों में एक उच्च श्रेणी के गायक हुए हैं | प्रसिद्ध संगीताचार्य 'पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर' इन्हीं के शिष्य थे | बालकृष्ण बुआ का जन्म सन् १८४९ (शाके १७७१) में कोल्हापुर के पास चन्दूर नामक ग्राम में हुआ था; इनके पिता रामचन्द्र बुआ स्वयं एक अच्छे गायक थे, इस कारण बाल्यकाल से ही इनके अन्दर भी संगीत की अभिरुचि उत्पन्न हो गई | भाऊ बुआ, देवजी बुआ, हद्दू खाँ, हस्सू खाँ आदि संगीत -विद्वानों से इन्होंने ध्रुवपद – धमार, ख्याल और टप्पा की शिक्षा पाई, इन चारों अंगों के आप कलावन्त थे; कुछ समय बाद इन्हें जोशी बुआ नामक प्रसिद्ध संगीतज्ञ से संगीत-शिक्षा प्राप्त हुई और अपने

परिश्रम व अभ्यास के द्वारा थोड़े समय में ही 'बालकृष्ण बुआ' प्रसिद्ध गायनाचार्य बन गए; आपने अनेक संगीत-सम्मेलनों में भाग लिया और मुम्बई में गायन-समाज की स्थापना की व 'संगीत-दर्पण' नाम का एक मासिक पत्र भी चलाया | सम्पूर्ण भारतवर्ष में संगीत-विद्या का प्रचार-प्रसार करते हुए 'श्रीबालकृष्ण बुआ' का सन् १९२६ में श्रीधाम-गमन हो गया |

पं. विष्णुनारायण भातखण्डे :-

बम्बई प्रान्त के बालकेश्वर नामक स्थान पर १० अगस्त १८६० ई. को पं. विष्णुनारायण भातखण्डेजी का जन्म हुआ था | आपकी संगीत में लगन बचपन से ही थी | १९०४ ई. में आपकी ऐतिहासिक संगीत-यात्रा आरम्भ हुई, जिसमें आपने भारतवर्ष के सैकड़ों स्थानों का भ्रमण करके संगीत-संबंधी साहित्य की खोज की; आपने बड़े-बड़े गायकों का संगीत सुना और उसकी स्वरलिपि तैयार करके 'हिन्दुस्तानी संगीत पद्धति, क्रमिक पुस्तक मालिका' के नाम से एक ग्रन्थमाला प्रकाशित कराई, जिसके ६ भाग हैं; संस्कृत भाषा में भी आपने 'लक्ष्य-संगीत' व अभिनव राग मंजरी' नामक पुस्तकें लिखकर प्राचीन संगीत की विशेषताओं एवं उसमें फैली हुई भ्रान्तियों पर प्रकाश डाला | श्रीभातखण्डेजी अपना शुद्ध ठाठ बिलावल मानकर ठाठ-पद्धति स्वीकार करते हुए १० ठाठों में बहुत से रागों का वर्गीकरण किया, आपके प्रयत्नों से कई स्थानों में संगीत-सम्मलेन हुए तथा संगीत-विद्यालयों की स्थापना हुई; इस प्रकार आपने अपने अथक परिश्रम द्वारा संगीत की महान सेवा करते हुए संगीत-जगत में एक नवीन युग स्थापित कर १९ सितम्बर १९३६ ई. को इस दुनिया से विदा होकर नित्य श्रीधाम में चले गये |

पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर :-

महाराष्ट्र प्रान्त के कुरुन्दवाड़ (बेलगाँव) में सन् १८७२ में श्रावणी पूर्णिमा के दिन पं. विष्णु दिगम्बर पलुस्कर जी का जन्म हुआ था | आपको संगीत-शिक्षा गायनाचार्य पं. बालकृष्ण बुवा से प्राप्त हुई | १८९६ ई. में आपने संगीत-प्रचार के हेतु भारत-भ्रमण आरम्भ किया | पलुस्करजी ने अपने सुमधुर आकर्षक संगीत के द्वारा संगीत-प्रेमी जनता को आत्म-विभोर कर दिया | पण्डितजी के व्यक्तित्व के प्रभाव से सभ्य समाज में संगीत की लालसा जाग उठी, जिसके फलस्वरूप संगीत के कई विद्यालय स्थापित हुए | बाद में पलुस्करजी मथुरा आये और उन्होंने शास्त्रीय संगीत की बन्दिशें समझने के लिए ब्रजभाषा सीखी क्योंकि बन्दिशें अधिकतर ब्रजभाषा में ही लिखी गई हैं, इसके अलावा उन्होंने मथुरा में ध्रुपद शैली का गायन भी सीखा | १९२२ ई. में आपने नासिक में 'रामनाम-आधार-आश्रम' खोला, तब से आपका संगीत भी रामनाममय हो गया | राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी जी ने भारतवर्ष को स्वतंत्र कराने के नित्य संकीर्तन करने की प्रेरणा ब्रजभूमि में आकर पं.रामकृष्णदासजी महाराज से ग्रहण की थी; तभी से गाँधीजी नित्य नियम से बड़ी निष्ठा के साथ "रघुपति राघव राजाराम, पतित पावन सीताराम |" इस कीर्तन को करते थे, जिसकी संगीतमयी धुन पं. विष्णुदिगम्बरजी ने ही सिखाई थी |

'विष्णुदिगम्बरजी की स्वरलिपि-पद्धति' भातखण्डे-स्वरलिपि-पद्धति से भिन्न है | सुप्रसिद्ध गायक डी. वी. पलुस्कर आपके सुपुत्र व मूर्धन्य संगीतज्ञ पं. ओंकारनाथ ठाकुर आपके शिष्य थे | पं. विष्णुदिगम्बरजी द्वारा संगीत की पुस्तकें 'संगीत-बालबोध, स्वल्पालाप-गायन, संगीत-तत्त्व-दर्शक, राग-प्रवेश, भजनामृत-लहरी' इत्यादि प्रकाशित हुई हैं | इस प्रकार संगीत का परम पवित्र वातावरण संस्थापित करके संगीत-साधना के परम पुजारी २१ अगस्त १९३१ ई. को श्रीप्रभु-धाम को प्रस्थान कर गये |

प्रात काल देशी गावत हैं, राधा रसिक निकुँज विहारी |
अद्‌भुत घोर उठत गायन की, गूंजत गहवर वन द्रुम डारी ॥
बजत मृदंग परनि अति सुन्दर, मिलवत ताल विविध लयकारी |
राग जमाय अलाप लेत हरि, प्यारी लेति मींड़ अति प्यारी ॥

श्रीभागवत में संगीत-वर्णन

बाबाश्री के राधासुधानिधि-सत्संग (२३/११/१९९८, १३/६/२०००) से संग्रहीत

जिस प्रेम में परम पुरुष भी आ करके श्रीराधारानी की किंकिरियों की दासता अपनाते हैं, ये परमाद्भुत प्रेमरस का चमत्कार है, जिसके आधीन होकर रसिकशेखर श्रीकृष्ण भी ऐसी लीला करते हैं | रस इतने विशुद्ध रूप में ब्रज में बह रहा है, जहाँ ऐश्वर्य की पताका बहुत दूर चली गयी | 'भगवान्' भगवान् नहीं रहा, एक प्रेमी बन गया, जो उसका शुद्ध रूप है | सारा संसार जिसको भगवान् मानता है और इस रस का ऐसा चमत्कार है कि 'भगवान्' यहाँ भगवान् नहीं रहा | भगवान् प्रेममय है, प्रेम के आधीन है, यह बात ब्रज में ही दिखाई पड़ती है क्योंकि श्रीजी की किंकिरियों की दासता तो बहुत दुर्लभ है, यहाँ के सखाओं की भी दासता छोड़ो, यहाँ के गायों-बछड़ों की ही नहीं अपितु पक्षियों तक की दासता श्रीकृष्ण करते हैं; ऐसा विचित्र यहाँ का प्रेम है | "**राधे चल री हरि बोलत, कोकिला अलापत सुर देत पंछी राग बन्यो |**" उस धाम के विषय में क्या कहा जाए जहाँ की कोकिलायें राग अलापती हैं, पक्षीगण जहाँ पर स्वर लगाते हैं, कैसा संगीत मय धाम है ..! "**जहाँ मोर काछ बाँधे नृत्य करत, मेघ मृदंग बजावत बंधान गन्यो |**" जहाँ मयूर भी नृत्य करते हैं, रास करते हैं और उनके साथ मेघ (बादल) मृदंग बजाते हैं, ऐसा यह विचित्र धाम है | जहाँ पर श्यामसुंदर के साथ सखियाँ होड़ करें तो करें, जहाँ लाड़लीजी का पालित 'मोर' भी श्रीकृष्ण से होड़ करता है और श्रीकृष्ण उसकी आधीनता करते हैं फिर सखियाँ तो बहुत आगे की चीज हैं | किसी रसिक महापुरुष ने एक लीला लिखी है कि एक बार श्रीजी का पालित 'मयूर' बादलों और श्रीकृष्ण को देखकर नाच रहा था | श्रीजी के उस मयूर के अद्भुत नृत्य को देखकर श्रीकृष्ण चकित रह गये ...! यह बात 'यामल' ग्रन्थों में भी लिखी है कि श्रीकृष्ण जो मयूर पंख अपने शीश पर धारण करते हैं, वह किशोरीजी द्वारा पालित मोर का पंख है |

"राधा प्रिय मयूरस्य पत्रं राधेक्षणप्रभम् |
विभर्ति शिरसा कृष्णस्तस्या चूड़ा निगम्यता ||

वह मयूर जिसको श्रीजी नित्य खिलाती थीं, ताल दे देकर नचाती थीं – **कदा मधुर सारिकाः स्वरसपद्यमध्यापयत्**
प्रदाय करतालिकाः क्वचन नर्तयत् केकिनम् |
(रा.सु.नि.- २२१)

ताली बजा-बजाकर जहाँ श्रीजी इस मयूर को नचाती थीं, नृत्य सिखाती थीं, उस मयूर के नृत्य को देख करके श्रीकृष्ण चकित रह गये | विचित्र प्रकार का उसका नृत्य था, शास्त्र में वर्णित 'नृत्य' की जो गतियाँ हैं, मयूर उस गति से नाच रहा था; ऐसा संसार में भी होता है | विवाह की बरात में जो घोड़ी जाती है, किसी-किसी घोड़ी को ऐसी शिक्षा मिलती है कि वह ताल से नाचती है, जबकि यह तो जड़ प्रकृति वाले संसार की बात है, फिर उस दिव्य धाम की तो क्या बात है जहाँ राधारानी का पाला हुआ मयूर नाच रहा था और उसको देखकर श्यामसुंदर चकित रह गये...!! श्रीजी ने श्यामसुंदर से कहा कि आप आश्चर्य क्यों करते हैं ? यह तो मेरा 'मोर' है; उसकी तीव्र गति देखकर श्यामसुंदर उस मोर से बोले कि क्या इससे अधिक तीव्र गति से तू नृत्य कर सकता है ? ऐसा कहना था कि वह मयूर रासमण्डल पर एकदम कूद पड़ा, मतलब यह कि मैं तैयार हूँ ...रासेश्वर तो तुम हो ही परन्तु मैं भी तो रासेश्वरी का हूँ ...| श्यामसुंदर मुस्कुरा गये और मयूर से बोले – 'अच्छा, तुम मेरे साथ नाचो |'

नृत्य प्रारम्भ हुआ परन्तु यह निर्णय कौन करेगा कि कौन हारा, कौन जीता ? श्रीजी ने स्वयं मयूर से कहा कि तुम मेरे प्यारे श्यामसुन्दर के साथ नृत्य करो, ये तुम्हारे साथ नाचना चाहते हैं, परन्तु मयूर वहीं खड़ा रहा ...| श्यामसुंदर उसकी भावना समझ गये और बोले – हे मयूरराज ! मेरे और तुम्हारे बीच में साक्षी यानि फैसला देने वाली निर्णायिका श्रीजी रहेंगी कि कौन बढ़िया नाचता है ? अब नृत्य शुरू हुआ... |

"होड़ परी मोरनि और श्यामहि"

एक बात पहले बता दें, कोई सोच सकता है कि इसे केवल रसिकों ने लिख दिया है, ये तो कविता है किन्तु यह कवितामात्र नहीं है | वृन्दावन की यह विशेषता है कि इस धाम के पक्षी आदि सब कुछ चिन्मय हैं, ऐसा भागवतजी में भी वर्णन है | श्रीमद्भागवत के एक उदाहरण को ले लीजिये, तब आप इस लीला को समझ सकते हैं | श्रीमद्भागवत के सख्य-लीला का उदाहरण देखें, इसके बाद यह लीला समझ में आएगी क्योंकि ये बड़ी मीठी लीलायें हैं और इन लीलाओं में आस्था बहुत कठिनाई से होती है क्योंकि 'मधुर-रस' में आस्था हो जाना बहुत बड़ी कृपा की बात है, इसमें आस्था तो ब्रह्माजी की नहीं हुई, वे सख्य लीला देखकर मोहित हो गये | **"शेष महेश सुरेश न जानैं, अज अजहू पछताय | यह रस रमा तनक नहिं चाख्यो, जदपि पलोटत पांय ||"** यह वह रस है कि **"यह रस कहबे को कोटि सरस्वती ही की मति हेराय |"** जिस रस को शेष, महेश, सुरेश आदि भी नहीं जान सके, इसमें आस्था होना एक बहुत बड़ी कृपा की बात है, इस रस को तो रमा (लक्ष्मी) ने जरा भी नहीं चखा - **"जदपि पलोटत पाँय"** फिर यह रस किसको मिलता है ?

"श्रीवृषभानु सुता पद अम्बुज, जिनके सदा सहाय |
तेहि रस मगन रहत निशि वासर, नन्द दास बलि जाय ||"

इस रस की देने वाली एकमात्र 'श्रीराधिकारानी' हैं | किशोरीजी के चरणकमल जिसकी सहायता कर दें, उसी को इस रस की प्राप्ति होती है; ऐसा मैंने (बाबाश्री ने) इसलिए कहा कि इस लीला को समझने के पहले श्रीभागवतजी का प्रमाण ले लो फिर उसके बाद तुमको यदि यह कवि की कविता ही लगती है तो समझो कविता अथवा फिर कदापि नहीं ...; वस्तुतः यह कविता नहीं है, यह अनुभूति है | श्रीमद्भागवत का प्रमाण यह है कि एक बार सखागण श्रीवृन्दावन में खेलने के लिए निकले, चारों ओर रंग-रस बरस रहा है | रसराज श्रीकृष्ण के बड़े रसीले सखा हैं, सभी बजवैया हैं, सभी गवैया हैं | 'ग्वालबाल' का मतलब यह नहीं समझना चाहिए कि वे लठा-भारती थे | शुकदेवजी वर्णन करते हैं - **केचिद् वेणून् वादयन्तो.....|** (भागवतजी १०/१२/७) इस श्लोक में बहुवचन का प्रयोग है, 'केचिद्' माने कितने ही सखा वेणु बजा रहे थे; इस श्लोक से पता चलता है कि भागवत में भारतीय संगीत की विविधतायें कितनी हैं, इसको समझना ही कठिन है | भारत के एक बहुत बड़े विद्वान् ने एक बार अपनी कथा में संगीत की आलोचना करते हुए कहा कि भागवत में संगीत की क्या आवश्यकता है ? ऐसी बात सुनकर पता पड़ा कि वे विद्वान् तो बहुत हैं परन्तु उनको भागवत का रस समझ में नहीं आया जबकि हैं तो भारत के बहुत बड़े विद्वान् | अरे, श्रीमद्भागवत में संगीत ही है, उसके अतिरिक्त और है ही क्या ? भागवतजी में ये सब गीत ही तो हैं – वेणु-गीत, प्रणय-गीत, गोपी-गीत, युगल-गीत, भ्रमर-गीत आदि | अतः गीत-संगीत के अलावा और भागवत में है ही क्या ? रासपंचाध्यायी के अन्दर संगीत की इतनी विविधताएँ हैं कि उनको एक अच्छा संगीतज्ञ भी नहीं समझ सकता | संगीत की बहुत-सी विधायें होती हैं लेकिन मूल रूप से संसार में संगीत के दो भेद किये गये हैं, (यह वर्तमानकाल की बात है |) एक तो भारत का 'शास्त्रीय संगीत' और एक पश्चिम का 'पाश्चात्य संगीत' | अधिकतर संसार पाश्चात्य संगीत में डूबा हुआ है परन्तु 'भारत का संगीत' सबसे अलग है | भारतीय शास्त्रीय-संगीत 'मेलौडी' प्रधान है और पाश्चात्य संगीत 'हार्मोनी' प्रधान है | यूँ समझिये कि जैसे एक 'स' मान लिया हमने तो 'भारतीय संगीत' में उसी को सब वाद्य 'स' मानकर चलते हैं और पाश्चात्य-संगीत में एक को हमने 'स' माना, दूसरे बाजे ने मध्यम को 'स' माना, तीसरे ने तीसरे को 'स' माना; इस प्रकार बहुत से वाद्यों के एक संकलित रूप को 'हार्मोनी' कहते हैं, यह पश्चिमी देशों में अधिक है; यह दोनों प्रकार के संगीत में मूल क्रियात्मक भेद है, वैसे तो स्वरलिपियों में भेद है | 'स्वर' तो सात भारत में भी हैं और पश्चिम में भी हैं | 'हार्मोनी' तब बनती है जब किसी एक ही 'गीत' को अनेक वाद्य बजा रहे हों |

अब श्रीभागवतजी के श्लोक (१०/१२/७) में अनेक वेणु एक साथ बज रहे हैं, यह 'हार्मोनी' है |

"केचिद् वेणून् वादयन्तो....." – इसमें बहुवचन है | ग्वालबालों के द्वारा बहुत से वेणु बजाये जा रहे हैं | जहाँ बहुत से वाद्य अनेक पिच लेकर बजते हैं, वहाँ 'हार्मोनी' हो जाती है; इससे पता पड़ता है कि 'भागवत' में कितने प्रकार का संगीत है, इसे असंगीतज्ञ विद्वान नहीं समझ एकता; मुश्किल तो यह है कि जो आज विद्वान् है, वह संगीतज्ञ नहीं है और जो संगीतज्ञ है, वह विद्वान नहीं है; ये चक्कर पड़ रहा है | 'श्रीमद्भागवत महापुराण' के ऊपर बड़े-बड़े शोध किये गये लेकिन अभी तक 'भागवत' का संगीत-पक्ष सामने साफ़-साफ कोई नहीं रख पाया | हमारी (बाबाश्री की) दृष्टि में अभी तक 'भागवत के संगीत-पक्ष' को कोई भी प्रस्तुत नहीं कर पाया | कोई न कोई होगा, मैं यह नहीं कहता कि ऐसा कोई नहीं है क्योंकि सृष्टि बहुत बड़ी है; श्रीभगवत्कृपा से रसिक भक्त अवश्य ही होंगे, वे ही इसे समझेंगे |

श्रीभागवतजी में ग्वालबालों के साथ श्रीकृष्ण का संगीत श्रीवृन्दावन के भीतर ही है, वृन्दावन पाँच योजन का है -

पञ्चयोजनमेवास्ति वनं मे देहरूपकम् |
कालिन्दीयं सुषुम्नाख्या परमामृतवाहिनी ||

अब सखाओं का संगीत आरम्भ हुआ | बहुत-से ग्वालबालों ने वेणु लिये; श्रीकृष्ण यहाँ कुछ नहीं कर रहे हैं, वे तो श्रोता बनकर बैठ गये | यह बड़ी सुन्दर लीला है, ऐसी लीलाओं का विस्तृत वर्णन रूपसागर में किया गया है, उसमें ऐसी लीला से सम्बन्धित बहुत-से पद हैं | ग्वालबाल भी वंशी बजाते हैं और श्रीकृष्ण से होड़ लगाते हैं, फिर अंत में श्रीकृष्ण को वंशी देते हैं तथा कहते हैं कि अब तू बजा, तेरी जैसी वंशी हम नहीं बजा सकते | बात सही है कि श्रीकृष्ण जैसी वंशी कौन बजाएगा ? जब उनके समान ही वंशी कोई नहीं बजा सकता, फिर उनसे बढ़कर कौन बजा सकता है ? परन्तु नंददासजी कहते हैं कि श्रीकृष्ण से बढ़कर वंशी बजाने वाले भी ब्रज में हैं, वे यह लीला लिखते हैं – **"राधा जू अधर धरी मुरली विराजी |**
ऐसी कबहू पिय पे न बाजी ||"

यह नन्ददासजी के पद का प्रमाण है | इसीलिए तो गोपियाँ गाती हैं | यह सब रसिकों का सार है | ब्रजवासी जो गाते हैं, वह कल्पना नहीं है | यह रसिकों का सार है | इसे नन्ददासजी ने पीछे लिखा है | ब्रजवासियों का लीला गान शुरू से चला आ रहा है – **बंसी बरसाने ते लाय दऊँगी पर सीख जा बजायबो | कान्हा यदि तू बंसी नहीं जानता है तो फिर राधे से सिखवाय दऊँगी |**
इस प्रकार गोपियाँ आज भी गाती हैं |

अस्तु, भागवत में ग्वालबालों की एक बहुत बड़ी संगीत सभा वर्णित है | बहुत से ग्वालबाल एक साथ वेणु लेकर बजा रहे हैं और श्रीकृष्ण श्रवण कर रहे हैं |

केचिद् वेणून् वादयन्तो ध्मान्तः श्रृङ्गाणि केचन

संगीत किसे कहते हैं ? **गीतं वाद्यं तथा नृत्यं त्रयं संगीतमुच्यते –** संगीत में गाना, बजाना तथा नाचना तीनों ही एक साथ होना चाहिए | बहुत से ग्वाल बाल श्रृंगी लेकर उसी स्वर में स्वर मिला रहे हैं | **ध्मान्तः –** वाद्य बजा रहे हैं | कितनी बड़ी सभा है | बहुत से ग्वालबाल हैं, 'आनद्य' वाद्यों को बजा रहे हैं | 'श्रृंग' सुषिर वाद्य है | इसके अलावा **"केचिद् भृङ्गैः प्रगायन्तः" –** कैसा संगीत है कि 'भँवरे' जो मीठी ध्वनि कर रहे हैं, उसी को 'स' मानकर सारा संगीत चल रहा है | यह बहुत बड़ी कला की बात है | एक बार किसी बहुत बड़ी संगीत सभा में एक प्रसिद्ध कलाकार गा रहे थे | संगीत सभा के हॉल से थोड़ी दूरी पर एक रेलवे लाइन थी | वहाँ से ट्रेन गुजरी तो इंजन ने जोर से सीटी बजाई | कलाकार ने उसी समय अपनी तान बदली और इंजन की सीटी की ध्वनि को खरज मानकर अपना गायन प्रस्तुत किया | यह चतुर गायकों का काम होता है | यह तो छोटी बात थी किन्तु वृन्दावन में देखो इन ग्वारियाओं की कला | 'भँवरे' कमलों पर गुंजार कर रहे थे, उसे ग्वालबालों ने सुना और भँवरों की गुनगुनाहट को खरज मानकर उससे राग का विस्तार करने लगे | सारे बाजे बजने लगे | अब इससे पता पड़ता है कि श्रीकृष्ण के ये सखा कितने चतुर थे | लोग समझते हैं कि ग्वालबाल केवल लठाभारती थे जबकि इनके

संगीत को सुनकर कोकिलायें भी गाने लगीं, उनका गान कूजन को लेकर होता है | कोकिलाओं का स्वर एक के बाद एक चढ़ता जाता है, इसको कूजन कहते हैं | जब कोकिलाओं ने गान आरम्भ किया तो **"कूजन्तः कोकिलैः परे" –** सब ग्वालबाल उस कूजन के साथ स्वयं भी कूजन करने लगे | यह बड़ा विचित्र संगीत शुरू हुआ | अब नृत्य भी होना चाहिए तभी पूर्ण रूप से संगीत बनेगा; अब ये ग्वालबाल हैं इसलिए **"विच्छायाभिः प्रधावन्तो"** पहले तो आकाश में जो पक्षी उड़ रहे थे, उनकी छाया के साथ ग्वालबाल दौड़े | फिर नृत्य की गति आई | **"गच्छन्तः साधुहंसकैः" –** वहाँ हंस चल रहे थे तो ये गोपबालक उन्हीं की चाल के अनुसार नृत्य करते हुए चलने लगे | वाद्य भी बज रहे थे और उसी की गति के अनुसार सब चल रहे थे | "**बकैरुपविशन्तश्च नृत्यन्तश्च कलापिभिः"** (भागवत १०/१२/८)

मयूर भी साथ-साथ उसी वाद्य की गति के अनुसार, उसी धुन के साथ नृत्य कर रहे थे और सब ग्वालबाल भी मयूरों के साथ नृत्य करने लगे | यह कहना चाहिए कि एक अद्भुत रास आरम्भ हुआ | वैसे तो रास में श्रीकृष्ण और गोपीजन तो नाचते ही हैं किन्तु भागवत में इस रास का भी वर्णन है कि एक-एक मयूर के साथ एक-एक ग्वालबाल नाचने लगे - **नृत्यन्तश्च कलापिभिः** | इसका वर्णन तो भागवत में शुकदेव जी ने किया है | इससे पता पड़ता है कि रसिकों ने जो यह पद लिखा है कि श्रीकृष्ण के साथ मयूर नृत्य में होड़ कर रहे हैं तो यह सही लिखा है | भागवत में तो कई जगह लिखा है जैसे – **क्वचिद् गायति गायत्सु मदान्धालिष्वनुव्रतैः | उपगीयमानचरितः स्रग्वी सङ्कर्षणान्वितः || क्वचिच्च कलहंसानामनुकूजति कूजितम् | अभिनृत्यति नृत्यन्तं बर्हिणं हासयन् क्वचित् || -** (भागवतजी १०/१५/१०,११)

रसिकों के इस पद में तो केवल गति की होड़ का वर्णन है किन्तु भागवत के इन श्लोकों में शुकदेव जी कहते हैं कि मयूर जब नाच रहा था तो श्रीकृष्ण मयूर के साथ होड़ लगाकर नृत्य करने लगे | अभिनृत्यति नृत्यन्तं – अभि उपसर्ग है, अभिसामुख्य - वृन्दावन का दिव्य मयूर नृत्य कर रहा था | श्रीकृष्ण उसकी ओर अभिमुख होकर, उसके सामने जाकर जैसा वह नृत्य कर रहा था वैसा ही नृत्य करने लगे | अब वहाँ बड़ी विचित्र घटना घटी | जिसका अनुकरण किया जाता है तो पूरी तरह किया जाता है | मोर नाचते-नाचते सारे पंखों को ऊपर कर लेता है | उसके अंग का पिछला भाग निरावरण हो जाता है | ग्वालबालों ने कन्हैया से कहा कि इस बात की भी होड़ कर | अब होड़ तो कृष्ण को करना ही है क्योंकि शुकदेव जी कहते हैं – **एवं निगूढात्मगतिः स्वमायया गोपात्मजत्वं चरितैर्विडम्बयन् |**

यहाँ पर तो ब्रह्म ब्रह्म नहीं है, भगवान् भगवान् नहीं है, यहाँ तो वह गोपात्मज अर्थात् एक ग्वारिया का बेटा है | इसलिए उसको ग्वारिया जैसा चरित्र करना पड़ेगा | उसको ग्वालबालों की यह बात माननी पड़ेगी तभी तो सूरदास जी ने कहा था – "**देखे री माई हरि नंगम नंगा |"**

यह ब्रज की लीला है | इसीलिए तो इसको ब्रह्मा आदि देव नहीं समझ सकते | ग्वालबालों के कहने पर श्यामसुंदर ने मयूर की नक़ल करते हुए अपना पूरा पीताम्बर ऊपर की ओर उठा लिया | जब ऊपर किया तो पीछे का भाग दिखाई देने लगा और सब ग्वालबाल हँसने लगे तथा बोले कि कन्हैया तो नंगा हो गया | शुकदेव जी ने कहा **– बर्हिणं हासयन् क्वचित्** – श्रीकृष्ण इस तरह सारे ग्वालबालों को हँसा रहे हैं | यह सारी लीला भागवत में है | अब आप रसिकों के इस पद को समझ लोगे | इस पद को समझाने के लिए ही इतने सारे प्रमाण दिए गये | अस्तु, श्यामसुंदर की चुनौती सुनकर राधारानी का मयूर रासमंडल में नृत्य करने के लिए कूदा | अब तो दोनों पहलवान मैदान में आ गये | परन्तु जब श्यामसुंदर ने ता-थेई कहकर अपना नृत्य शुरू किया तो मयूर चुप खड़ा रहा | उसने नृत्य शुरू नहीं किया | श्यामसुंदर मुस्कुराकर बोले – 'बस, तू इतने में ही हार गया |' वह तो श्रीजी का पालित मोर था इसलिए श्रीजी बोलीं – 'श्यामसुंदर ! ऐसी बात नहीं है | तुम बेईमानी करते हो | मेरा मोर कहता है कि मेरे और

श्यामसुंदर के नृत्य का निर्णायक कौन होगा ? इसीलिए वह नृत्य शुरू नहीं कर रहा है |' बात सही है | किसी बेईमान से बात करने से पहले सच्चा गवाह होना जरूरी है | ग्वाल बालों ने कहा था – इस बेईमान कृष्ण को हटा दो | इसके साथ खेलना ठीक नहीं है | जब कृष्ण को खेल से निकाल दिया गया तब वे ग्वाल बालों के आगे हा-हा खाने लगे | इसलिए मोर भी समझ रहा है कि इनके साथ दाँव व्यर्थ है | इनकी जीत तो जीत रहेगी ही बल्कि इनकी हार भी जीत में बदल जाएगी | अतः मोर नहीं नाचा | तब श्रीजी ने कहा कि यह साक्षी चाहता है तब फिर आपके साथ होड़ करेगा | श्यामसुन्दर बोले – ठीक है, आओ मयूरराज ! मेरे और तुम्हारे बीच साक्षी श्रीजी रहेंगी कि कौन जीता, कौन हारा ? **होड़ परी मोरनि अरु श्यामहि |**

आगहु मिलहु मध्य सचु की गति लेहिं रंग धौं कामहि ||

हे मयूरराज ! मेरे और तुम्हारे बीच में मध्यस्थ राधारानी हैं | **"हमारे तुम्हारे मध्यस्थ राधे और जाहि बदौ**

बूझि देखो तृण दे कहा है यामहि"

हमारे तुम्हारे बीच मध्यस्थ राधारानी हैं, और किससे बात कही जाए ? **बूझि देखो तृण दे कहा –** तिनका की साक्षी देकर श्यामसुंदर ने कहा कि जो श्रीजी निर्णय देंगी, वही होगा | चलो, बेईमानी नहीं होगी |

नृत्य शुरू हुआ और जैसे चौपड़ की बाजी होती है, उसमें कई तरह की चाल होती है जैसे सिपाही की चाल, वजीर की चाल, बादशाह की चाल आदि | चाल से मात दे देना, यही चौपड़ का खेल होता है | ऐसा नृत्य शुरू हुआ कि श्रीकृष्ण ने एकगुन लिया तो मोर ने दुगुन किया | श्रीकृष्ण ने तीन गुन लिया तो मोर ने चौगुना गति दिखाई, चौपड़ का सा खेल हो रहा है | ऐसी होड़ चल रही है |

श्रीहरिदास के स्वामी को चौपर को सो खेल

इकगुन दुगुन तिगुन चतुरा गुन जाके नामहि

नृत्य समाप्त होने पर श्रीजी ने निर्णय दिया – हे श्यामसुंदर ! यह बाजी तो आपसे मयूर ले गया क्योंकि जितनी भी आपकी चौपर की बाजियाँ थीं, सबको इसने मात दे दिया और जिसके नाम बाजी लिख गयी है, यह ऐसा मयूर है |

कथनाशय यही है कि श्रीकृष्ण द्वारा श्रीजी की सहचरियों की आधीनता तो बहुत ऊँची बात है, श्रीकृष्ण तो वृन्दावन के पक्षियों तक की आधीनता करते हैं, श्रीजी के मयूर की आधीनता करते हैं और इसका प्रमाण मैंने दिया यामल ग्रंथों से | उस मयूर के पंख को श्रीकृष्ण अपने सिर पर धारण करते हैं | ऐसा जो मयूर है, श्यामसुंदर उसकी आधीनता स्वीकार करते हैं |

साक्षात् प्रेम-विग्रहिणी 'श्रीराधिका'

बाबाश्री के राधासुधानिधि-सत्संग (११/६/२०००) से संग्रहीत

जितनी भी गोपियाँ हैं, सहचरियाँ हैं, ये सब श्रीजी का प्रकाश हैं | **यत्पादपद्मनखचन्द्र..... | (रा.सु.नि. – १०)** जिन श्रीराधिकारानी के चरणकमल में दस नखचन्द्र हैं | यह अभूत-उपमा है क्योंकि कमल और चन्द्रमा का कहीं मेल ही नहीं खाता है | चन्द्रमा को देखकर कमल मुरझा जाता है | परन्तु श्रीजी के चरणों में एक विचित्रता है | वे चरण कमल हैं | उनमें दस नख-चन्द्रमा हैं और दस नख-चंद्रमाओं से जो चन्द्रिका और चाँदनी निकल रही है, उनमें एक-एक किरणें ही गोपी हैं | चन्द ही नहीं बल्कि चन्द्रनखमणि कह दिया है | ऐसा इसलिए कहा क्योंकि चन्द्रमा को देखकर चन्द्रकान्तमणि पिघलती है और रसरूप हो जाती है | यहाँ सौन्दर्य का बड़े ही विचित्र ढंग से वर्णन किया गया है जिससे कि वह हमारे अंतःकरण में एक झाँकी खींच दे | एक स्थान पर सुधानिधिकार लिखते हैं - **सान्द्रानुरागरससारसरः.....| (**रा.सु.नि.–३४)

राधारानी का मुख एक चाँद है और कैसा चाँद है, विलक्षण चाँद है | उस चाँद की कोई समता नहीं है | उनके मुखचन्द्र की चाँदनी से अनन्त शरद चंद्रमा भासित होते हैं, करोड़-दो करोड़ नहीं | कहीं-कहीं करोड़ भी लिखा है - **कोटीन्दुच्छविहासिनी.....| (रा.सु.नि. –१८२)** करोड़ों-करोड़ों चंद्रमाओं का उपहास करने वाला गौरांगी का मुखचन्द्र है | चाँद में अमृत का निवास बताया गया है किन्तु वह अमृत तो पुराना था, प्राकृत था, समुद्र मंथन से प्रकट हुआ था | किन्तु किशोरीजी के मुखचन्द्र से प्रतिदिन, प्रतिक्षण नवीन सुधा निकलती है | वह आपके मुखारविन्द के भाषण से प्रसृत होता रहती है | ऐसा वह विलक्षण चाँद है –

राकानेकविचित्रचन्द.....| (रा.सु.नि १२५)

करोड़ों पूर्णिमा के चाँद यदि निकलें और वे अपने प्रेमामृत से, प्रेमामृत की किरणों से.....क्योंकि इस चाँद में प्रेमामृत तो नहीं है लेकिन यदि करोड़ों चाँद निकलें और अपनी प्रेमामृत की किरणों से अनन्त ब्रह्मांडों को भर दें और फिर वृन्दावन धाम में ही कहीं उनका प्रकाश दिखाई पड़े क्योंकि उन ब्रह्माण्डों में तो वह चिन्मयता नहीं है, वह देश नहीं है तो शायद हम तुलना कर दें नहीं तो राधारानी का मुखचन्द्र तो विलक्षण है | चंद्रमा को तिरस्कृत करने वाला है | **सुधाकरमुधाकरं.....| (रा.सु.नि १६१)** इस चाँद से तो पुरानी चाँदनी निकलती है, नयी चाँदनी नहीं निकला करती है किन्तु राधारानी के मुख से तो नयी-नयी चाँदनी निकला करती है, कैसी चाँदनी ? जहाँ नयी-नयी मधुरता हर समय है, ऐसी चाँदनी निकला करती है, ऐसी चाँदनी का समुद्र है राधारानी का मुखचाँद | इसीलिए श्रीकृष्ण के नेत्र चकोर बन जाते हैं | इस प्राकृत चाँद को देखने के लिए चकोर नहीं बनते हैं क्योंकि ये तो प्राकृत है | जो राधारानी का मुख चाँद है उसे देखने के लिए श्रीकृष्ण के नेत्र चकोर बन जाते हैं | ऐसी चाँदनी से जो लबालब भरा हुआ है, तुन्दिल है, खूब पुष्ट, स्थूल है | 'तुन्दिल' उसको कहते हैं जिसकी बहुत बड़ी तोंद होती है; राधारानी का मुख भी चाँदनी से तुन्दिल है, लबालब भरा हुआ है | वर्तुलाकार (गोलाकार) मुख है | रस के भरे कपोल – तुन्दिल का यह मतलब होता है | सौन्दर्य में कपोलों की तुन्दिलता जरूरी है | बुढ़ापे में गाल पिचक जाते हैं जैसे नींबू निचोड़ दिया हो, आम निचोड़ दिया हो, किन्तु तुन्दिल मुख तो रस का भरा कपोल है, वह अलग छटा रखता है और पिचके हुए मुख में कोई सौन्दर्य नहीं होता है | इसीलिए इस श्लोक में कहा गया है – **"जलधितुन्दिलं राधिके"** – राधारानी का मुख चाँदनियों के समुद्र का तुन्दिल घड़ा है | दिव्य चाँदनी, यह चाँदनी नहीं जो हम लोग देखते हैं | वह चाँदनी जो हर ब्रह्माण्ड में चंद्रमाओं का तिरस्कार करने वाली है | उस मुख रूप चाँद को देखने के लिए श्रीकृष्ण के नेत्र प्यासे चकोर की तरह देखा करते हैं | ऐसा चाँद आया कहाँ से ? यह समुद्र मन्थन वाला चाँद नहीं है जो प्राकृत समुद्र से प्रकट किया गया | देवता और असुर लगे तथा मन्दराचल की मथानी

बनाई गयी, वासुकि नाग की रस्सी बनायी गयी | कच्छप भगवान् ने उस पहाड़ को अपनी पीठ पर धारण किया और फिर उसके बाद मंथन हुआ | इसीलिए तो इस चंद्रमा में कोई सुन्दरता नहीं है | प्राकृत वस्तुओं से इसका प्राकट्य हुआ है | इसीलिए रसिक कहते हैं कि चिन्मय रस के समुद्र से उसको मथा गया, उससे जो चाँद निकला, उस चाँद की उपमा राधारानी के मुख से की जाती है | यही भाव गोस्वामी जी ने भी रामायण में लिखा है | उन्होंने सोचा कि सिया जी के मुख की उपमा चाँद से देना तो बहुत गलत बात है | प्राकृत चीजों से प्रकट हुआ चाँद है | इसी तरह ये जो लक्ष्मी जी हैं, इनके भी प्राकट्य में जो उपकरण लगे, वे सुन्दर नहीं थे | नाग वासुकि कोई सुन्दर उपकरण नहीं है | देवता, असुर समुद्र मंथन करने लगे | असुर भी कोई सुन्दर उपकरण नहीं हैं | इसीलिए गोस्वामी जी ने लिखा – **जौं छबि सुधा पयोनिधि होई | परम रूपमय कच्छपु सोई || सोभा रजु मंदरु सिंगारू | मथै पानि पंकज निज मारू ||** (रा. बा. का.- २४७)

अतः उपकरण भी दिव्य होवें | शोभा की रस्सी हो, श्रृंगार रस की मथानी बने | मंदराचल पहाड़ की मथानी नहीं, पहाड़ तो बड़ा कर्रा होता है | समुद्र भी प्राकृत है | यहाँ तो छबि सौन्दर्य का समुद्र हो | इसीलिए राधारानी के रसिक भी कहते हैं – **रसाम्बुधिसमुन्नतं वदनचन्द्रमीक्षे तव –** चिन्मय रसाम्बुधि से प्रकट गौरांगी राधारानी का मुखपंकज है, मुख मयंक है, वह चिन्मय रसार्णव से समुद्भूत है | चंद्रमा तो जब प्रकट होता है तो उसमें एक न एक दोष होता ही है चाहे वह चिन्मय ही हो | उसको देखकर कमल छिप जाता है, अपने को बंद कर लेता है | कमल बंद होकर कली बन जाता है | उसकी पंखुड़ियाँ सिमट जाती हैं और जब सूर्योदय होने लगता है तब अपने आप कमल खिलता है | सूर्य को देखकर एकदम पूरा खिल जाता है और चंद्रमा को देखकर आँख बंद कर लेता है | इसी तरह जब राधिका रानी का मुख चाँद प्रकट हुआ तो उनके जो दो स्तनमण्डल थे, वे मुख चन्द्र को देखकर कली बन गये | इसीलिए स्तन कमल कभी आज तक विकसित नहीं हो पाए क्योंकि मुख चन्द्रमा सदा खिला रहता है | इसीलिए स्तन सदा ही कली रूपा ही बना रहा, ऐसा विचित्र सौन्दर्य है – **"सान्द्रानुरागरससारसरः सरोजं किं वा द्विधा मुकुलितं मुखचन्द्रभासा |"** मुकुलित हो गया | मुकुल माने कमल कली ही बना रहा | क्यों ? मुखचन्द्र की किरणों से | स्तनकमल कभी विकसित ही नहीं हो पाए और न होंगे क्योंकि यह मुखचन्द्र प्राकृत चाँद नहीं है कि आज दौज हो गया, चौथ हो गया, घट गया, बढ़ गया, अमावस्या को बिलकुल गायब हो गया | राधारानी के मुख चाँद में सदा पूर्णिमा ही रहती है | दिन-रात खिला रहता है और यह चाँद तो दिन में भाग जाता है | जबकि राधारानी का मुखचाँद तो नित्य ही विकसित रहता है चाहे रात हो चाहे दिन हो |

फिर श्रीजी की सहचरियों के महत्त्व के बारे में तो क्या कहा जाये ? श्रीराधासुधानिधि के श्लोक ८ – **"यत्किंकरीषु बहुशः खलु काकुवाणी"** का तात्पर्य है कि केवल एक किंकरी की बात नहीं है | जितनी भी किशोरीजी की किंकरियाँ हैं, उन सबकी आधीनता श्रीकृष्ण स्वीकार करते हैं, इसका कारण है प्रेम की महिमा; इन सहचरियों की महिमा यह है कि इनका ऐसा अन्तःकरण (मन) है कि ध्रुवदासजी लिखते हैं –

"ललित लड़ैती कुँवरि बिन, और न कछु सुहाये"

इनको श्रीलाड़लीजी के बिना और कुछ अच्छा ही नहीं लगता है | श्रीकृष्ण पर भी यही बात घटित होती है | श्रीजी के निकुंज में आने के बाद वे सारा ब्रह्माण्ड, अपने सारे भक्तों को भूल जाते हैं | "**दूरे सृष्ट्यादिवार्त्ता**.....|" सृष्टि कहाँ है, कितने ब्रह्माण्ड हैं, ये सब कुछ श्यामसुंदर भूल जाते हैं | "**न कलयतिमनाङ्नारदादीन् स्वभक्तान्" –** नारद, शिव आदि भक्त आते हैं, श्रीकृष्ण का ध्यान उनकी ओर जाता ही नहीं है, जब वे श्रीजी की कुंजों में प्रवेश करते हैं | यहाँ तक कि **"श्रीदामाद्यैः सुहृदिभिर्न मिलति"** अपने सखागणों तक से भी नहीं मिल पाते हैं | "**हरति स्नेहवृद्धिं स्वपित्रोः"** – नन्द-यशोदा के प्रेम को भी भूल जाते हैं | ऐसा वर्णन होरी लीला में कई जगह आता है कि

श्रीकृष्ण बरसाने में जब होरी खेल रहे होते हैं और उस समय यशोदाजी की ओर से बुलावा आता है तो वे नहीं जाते हैं | साँकरीखोर की लीला में भी ऐसा वर्णन मिलता है कि श्रीकृष्ण मैया द्वारा पहनाये गये सुन्दर आभूषण बेचकर दही खरीदते हैं और जब यशोदाजी के पास यह खबर पहुँचती है तो भी वे परवाह नहीं करते हैं | यशोदाजी कहतीं हैं कि मेरे लाला ने ग्वालिन की खट्टी छाछ-दही के लिए मेरे पहनाये हुए आभूषण बेच दिए, यह ऐसा रस है - **"आज दधि कंचन मोल भई | या दधि को ब्रह्मादिक दुर्लभ गोपन बाँट लई ||"** श्यामसुंदर ने सखियों से दही लिया और अपने सखाओं को बाँट दिया |

"दधि के बदले मुंदरी दीनी जसुमति खबर भयी"

यशोदाजी के पास खबर पहुँची कि तेरे लाला ने तेरी पहनाई हुई मुंदरी देकर सखियों से दही लिया है | इसीलिए तो राधासुधानिधि में कहा गया –

"हरति स्नेह वृद्धिं स्वपित्रोः"

सबको भूलकर फिर श्रीकृष्ण क्या जानते हैं तो कहा गया **"किन्तु प्रेमैकसीमां मधुररससुधासिन्धुसारैरगाधाम् –** उस गौरसिन्धु को जानते हैं जिनका नाम 'श्रीराधिका' है, कैसी हैं राधिकारानी **"प्रेमैकसीमाम्" –** प्रेम की एकमात्र सीमा वही हैं और कोई दूसरी सीमा हो ही नहीं सकती | इस श्लोक में शब्द 'एक' लगा दिया गया है, यहाँ 'एक' अद्वितीय अर्थ में प्रयुक्त हुआ है | जैसे लोग कहते हैं कि वह गाने में एक ही है यानि इसकी कोई जोड़ नहीं है |

'एकसीमा' अर्थात् जो अद्वितीय सीमा हैं, जिनका अनन्त ब्रह्मांडों में कोई जवाब नहीं है | क्यों जवाब नहीं है तो बोले - **"मधुररससुधासिन्धुसारैरगाधाम्"** इसलिए जवाब नहीं है क्योंकि पहली बात तो यह कि मधुर रस ही दुर्लभ है, जिस मधुर रस को ब्रह्मा-शिवादि भी तरसते हैं | भगवान् शिव इस रस की प्राप्ति हेतु गोपीश्वर बने; उस मधुर रस के सागर का भी अमृत निकाला गया, उस सुन्दर मधुर रस को मथा गया और उसका जो अमृत निकला, वह बना **'मधुररससुधा' |** किसी ने कहा कि समुद्र को मथा गया, समुद्र से अमृत निकला किन्तु क्या कभी अमृत का भी समुद्र सुना है ? ऐसा कहने में तो अतिशयोक्ति लगती है तो बोले कि नहीं, ऐसा होता है | ऐसा संसार में भी होता है, जैसे हम लोग समझते हैं कि दूध को दही बनाकर मथा गया तो उसमें से माखन निकला और माखन को तपाने से घी निकला | घी सबका सार है | हम लोग यही जानते हैं कि घी बहुत बड़ी चीज है | इससे आगे की बड़ी चीज साधारण लोग नहीं जानते हैं किन्तु घी का भी समुद्र होता है और उसको भी मथा जाता है; ऐसा इस संसार में भी होता है | लखनऊ के नवाब 'वाजिद अली शाह' की पूड़ी 'घृत-फूल' में बनती थी, तभी तो उसके तीन-चार सौ से अधिक रानियाँ थीं | उसके यहाँ रसायन-औषधियों को कई मन घी में डालकर उसका सार एक फूल कई दिनों में निकलता था | 'घृत-फूल' की पूड़ी वह नवाब खाता था | ये रसायन-क्रियायें हैं, साधारण लोगों को इनका ज्ञान ही नहीं है | राधासुधानिधिकार बोले कि 'राधारानी' कौन हैं तो बोले कि मधुर-रस को मथा गया, उससे 'सुधा' यानि अमृत निकला और 'अमृत' का भी जो समुद्र था उस 'मधुररससुधासिन्धु' को भी मथा गया | कोई कहे कि ऐसा तो हमने कभी सुना नहीं तो यही तो यहाँ की विशेष बात है, इसीलिए तो 'श्रीकृष्ण' भी सदा राधारानी के आधीन रहते हैं | जो तुमने कभी नहीं सुना, उसी को यहाँ सुन लो | जो सर्वतंत्र-स्वतंत्र 'ब्रह्म' था, वह यहाँ की दासता करता है, यह सुन लो | 'मधुररस' का मंथन करने से अमृत निकला, फिर उस अमृत के सिन्धु का भी सार खींचा गया, वह सार कितना निकला ? जैसे कई मन 'घी' को रसायन-क्रिया के द्वारा औटाने पर थोड़ा-सा 'घृत-फूल' निकलता था, परन्तु यहाँ तो रस-समुद्र को मथा गया तो रसामृत निकला फिर रसामृतसिन्धु को भी मथा गया तो निकला – **"सिन्धुसारैरगाधाम्"** अनन्त रसामृतसिन्धुसार निकला, वही थीं 'राधारानी' | 'अगाधाम्' इसीलिए 'श्रीराधाम्, उसका अनुप्रास लगा दिया, ऐसी जो श्रीराधा हैं |

"**श्रीराधामेव जानन्मधुपतिरनिशं कुंजवीथीमुपास्ते** |"

इसीलिए श्रीकृष्ण जब यहाँ की कुंजों में आते हैं तो फिर उन्हें और कुछ अच्छा नहीं लगता है, क्या अच्छा लगता है ? **नेक नैन की कोर के लीन्हो चित्त चुराय** – एक नेत्र की कोर से ही श्रीकृष्ण के चित्त की चोरी हो गयी |

"**अमित कोटि ब्रह्माण्ड की प्रभुता मन लगी थोर |**
कर जोरे चित औरें बंक दृगन की कोर ||"

श्रीकृष्ण ने सोचा कि अब तक तो मैं भगवानपने के बोझ को ढो रहा था | भगवान् बनने में कोई आनन्द नहीं है | ये तो बेकार का झगड़ा है | प्रभुता का बंधन भी व्यर्थ है | श्रीकृष्ण ने सोचा कि इसलिए मुझे प्रभुता को छोड़ना चाहिए लेकिन फिर क्या बनूँ ? अब यहाँ आ जाना चाहिए और "**कर जोरे चितवत रहें**" इसीलिए भगवान् पना छोड़कर श्रीराधा रानी के आगे हाथ जोड़कर श्रीकृष्ण यहाँ खड़े रहते हैं | ऐसा क्यों हुआ ? "**देखो बल या प्रेम को**" यह प्रेम की शक्ति है | प्रेम का ही तो प्रभाव है कि राजा अपना राज-पाट छोड़ देता है, अपना सब वैभव छोड़ देता है | प्रेम की ही तो शक्ति है कि यहाँ भगवान् ने अपना भगवान् पना छोड़ दिया |

"देखो बल या प्रेम को सर्वस लीनो छीन"

श्रीकृष्ण जो अनन्त ब्रह्माण्डों के सर्वस्व थे, प्रेम ने उनका सर्वस्व छीन लिया |

"महामोहन गज मत्त पिय बिन अंकुश बस कीन्ह"

जो रूप मत्त, यौवन मत्त, गुण मत्त, रस मत्त, प्रेम मत्त – ऐसे गजराज की तरह थे -

ययोन्मीलत्केलीविलसितकटाक्षैककलया
कृतो वन्दी वृन्दाविपिनकलभेन्द्रो मदकलः |
(रा.सु.नि. – १८७)

उनको श्री जी ने बन्दी बना लिया |

"अखिल लोक की सारी दीन्ही तृण ज्यों डारि"

'त्याग' श्रीकृष्ण के समान कौन कर सकता है ? अरे, हम लोग क्या त्याग करेंगे ? हम साधु लोग तो कहीं भी जाते हैं तो अपने मान-सम्मान की सोचते हैं कि हम विरक्त हैं, हम साधु हैं | कोई कहता है कि हम विद्वान् हैं, कोई कहता है कि हम गवैया हैं, कोई कहता है कि हम ये हैं | मनुष्य अपनी सत्ता को नहीं छोड़ता है तो फिर वह प्रेम क्या पायेगा ? प्रेम जहाँ भी है, वहाँ सर्वस्व न्यौछावर करना पड़ता है | प्रेम जहाँ है, वहाँ कुछ बचाकर नहीं रखना पड़ता है | वह तो बनियागिरी है, प्रेम नहीं है | प्रेम तो वह है कि "**अखिल लोक की सारी दीन्ही तृण ज्यों डारि**" श्रीकृष्ण ने अपने भगवान् पने को तिनका की तरह फेंक दिया | "**छिन छिन प्रति सेवा करें रहें अपन को हार**" श्रीकृष्ण अपनापन भूल गये कि हम भगवान् हैं |

"पिय की प्रीति की रीति सुनि हिये होत हुलास |
दासी जहाँ लगि प्रिया की ह्वै रहे तिनके दास ||"

प्रियाजी की आधीनता नहीं, **"दासी जहाँ लगि प्रिया की |"** जहाँ तक श्रीराधिकारानी की दासियाँ हैं, किंकिरियाँ हैं, उनकी भी दासता श्रीकृष्ण करने लगे | इसीलिए तो कहा गया है –

यत् किंकरीषु बहुशः ..... (रा.सु.नि.-८)

परमप्रेममयी ब्रजभूमि

बाबाश्री के प्रातःकालीन सत्संग (३/८/२०२१) से संग्रहीत

सबसे पहले 'परोपकार करना' सीखो | 'परोपकार' पैसे से नहीं होता, 'परोपकार' अपनी क्रियाओं से होता है; जैसे - सत्संग जहाँ होता है, वहाँ इस तरह बैठें कि दूसरों के बैठने के लिए भी सुविधा रहे, यह 'परोपकार' हो गया | बैठना-उठना सीखो, ब्रज में श्यामसुन्दर ने यही सिखाया कि हमारी प्रत्येक क्रिया प्रेममय हो | सारे संसार में ब्रज जैसा देश नहीं है | 'परोपकार' करने के लिए पैसे की आवश्यकता नहीं है | 'चीरहरण' के प्रसंग में भगवान् श्रीकृष्ण ने यही सिखाया कि हम परोपकार करें, उन्होंने ही ब्रज में भिक्षा माँगने की परम्परा चलाई है; उन्होंने स्वयं ब्रज के घर-घर में भीख माँगी, दही माँगा, छाछ माँगी ...| छोटे बनकर भिक्षा माँगो, बड़े मत बनो | कृष्ण ने सबसे पहले यही सिखाया है कि हर क्रिया में 'खाने-पीने, उठने-बैठने' में परोपकार करना सीखो | श्रीभगवान् ने चीरहरण इसलिए किया था कि हमारे (भगवान् के) सामने लज्जा-संकोच न रहे, इसको प्रेम कहते हैं और यही उपदेश उन्होंने भागवत में दिया | यदि हम लोग ऐसे प्रेममय बन जाएँ तो समाज की सब लड़ाई खत्म हो जाएगी |

१९४७ ई. में हमारे (बाबाश्री के) सामने भारत स्वतंत्र हुआ | स्वतंत्र भारत में 'भारतीय सरकार' बनने के बाद यह प्रश्न उठा कि राष्ट्रपति किसको बनाया जाए ? यह झगड़ा आपस में हुआ...| दक्षिण भारत के राजगोपालाचार्यजी 'राष्ट्रपति' बनना चाहते थे लेकिन राजेन्द्रप्रसादजी को 'राष्ट्रपति' बनाया गया | उस समय महात्मागाँधीजी को राष्ट्रपति नहीं, 'राष्ट्रपिता' माना गया क्योंकि उनमें जो गुण थे, वे किसी में नहीं थे | गाँधीजी ने अपनी एक पुस्तक में लिखा है – "यदि वीर्य-रक्षा का नाम ब्रह्मचर्य है तो मैं इतना वृद्ध हो चुका हूँ, फिर भी मेरे मन में विषय का संस्कार है, अभी मुझमें कमी है |" इस सत्य को स्वीकार करने के कारण वे 'राष्ट्रपिता' बोले गये, ऐसा सच बोलने वाले विरले ही होते हैं जो अपनी कमियों को स्पष्ट कह दें | 'सत्य बोलने' के इसी गुण ने उन्हें 'राष्ट्रपिता' बना दिया | 'राष्ट्रपति' तो छोटी चीज है, गाँधीजी 'राष्ट्रपिता' अर्थात् राष्ट्र के पिता कहलाये | ऐसा बिल्कुल सत्य बोलने वाला स्वतंत्र भारत में कोई नहीं हुआ | ये घटना मेरे (बाबाश्री के) समय में हुई थी, उस समय मैं विद्यार्थी था, स्कूल में पढ़ता था लेकिन ये सब बातें सुनता था | मैं समझ गया कि 'राष्ट्रपिता' गाँधीजी वास्तव में इसी गुण के कारण ही बने हैं, उनमें सत्य का गुण था, अपनी कमी को कह देना | 'सत्य' माने सच बोलना, सच करना; ऐसा गुण और किसी में नहीं था, इसीलिए गाँधीजी को 'राष्ट्रपिता' बनाया गया, उनके नेतृत्त्व में इसी गुण के कारण 'कांग्रेस' पार्टी आगे बढ़ी | उसके बाद हमारे सामने बहुत-सी राजनीतिक पार्टियाँ बनीं | यहाँ तक कि 'राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ' भी अस्तित्त्व में आया किन्तु महात्मा गाँधीजी जैसा सत्य गुण किसी में नहीं था |

आजकल 'श्रीनरेन्द्रमोदीजी' भारतवर्ष के प्रधानमन्त्री हैं, इनमें देश-भक्ति है और यह गुण भी है कि गाँधीजी को इन्होंने हटाया नहीं | आज भी जो नोट छपते हैं, उन पर गाँधीजी का चित्र छपा रहता है; इसी बात ने उनको मजबूत बना दिया | हम लोग भारतवासी हैं, इसलिए आपस में सच्चा प्रेम करें, द्वेष न करें, एक-दूसरे की सेवा करके सच्चा सुख दो ...|

ब्रजभूमि की 'विशुद्ध प्रेममयी संस्कृति' होने से ही ये परमानुपम 'अद्भुत व अलौकिक' है |

घुँघरू बाज रहे छुम-छननन, दम्पति के गह्वरवन कुँजन |
नाच रही कीरति सुकुमारी, लै गलबाँह यशोदानन्दन ||
कबहुँक गावति बोल सुनावति, ता थुं ता थुं तों तननननन |
भाव बतावति सब दिखरावति, घोर मृदंगन बजत जब परन ||

गहवर वन में नित्य गूँजती गूँज मधुर मुरली की सुन्दर |
सा रे गम पध नि सप्त सुरन की धारा बहती है रस निर्झर ||
राग रागिनी तान अलापन, विविध मूर्च्छना ग्राम श्रुतिन धर |
कुञ्ज निकुंजन लता पत्र द्रुम, झूम रहे सब वंशी के स्वर ||

'सत्संग' ही साधन व साध्य

श्रीबाबामहाराज के प्रातःकालीन सत्संग (१०/६/२०१५) से संग्रहीत

किसीने प्रश्न पूछा है कि जीव प्रारब्ध के अनुसार कर्म करता है कि मन के अनुसार या प्रभु की इच्छा से? यह कर्म-सम्बन्धी एक बड़ा प्रश्न है | इतना ही समझना बहुत है कि भगवान् भक्तों के लिए समान हैं और हमको तर्क-वितर्क छोड़कर भक्ति करनी चाहिए |

देह धरे कर यह फलु भाई | भजिअ राम सब काम बिहाई ||

(श्रीरामचरितमानसजी, किष्किन्धाकाण्ड -२३)

सभी कामनाओं को छोड़कर भगवान् का भजन करो, इसी में कल्याण है, मानव-जन्म की सफलता है |

भगति पच्छ हठ नहिं सठताई | दुष्ट तर्क सब दूरि बहाई ||

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड -४६)

जो बात समझने योग्य है, केवल वही बात समझना चाहिए कि भगवान् की कृपा हुई है और सत्संग मिल गया, इतना ही समझना काफी है –

गिरिजा संत समागम सम न लाभ कछु आन |
बिनु हरि कृपा न होइ सो गावहिं बेद पुरान ||

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड -१२५)

भगवान् शंकर कहते हैं - हे पार्वती ! इस संसार में इन्द्र बनाना, चक्रवर्ती बादशाह बनाना भी आसान है | संत-समागम (सत्संग) के समान कुछ लाभ नहीं है | अगर किसी को विशुद्ध सत्संग मिल गया तो केवल भगवान् की कृपा समझ करके भक्तिमार्ग पर चलते रहो कि हमारा भगवान् में प्रेम कैसे हो ? भगवान् की कृपा हो गई जो तुमको सत्संग मिल गया | वेदों-पुराणों में यही लिखा है कि यदि भगवान् नहीं मिलें तो कोई बात नहीं अगर तुमको भगवान् का भक्त मिल गया तो गोस्वामीजी कह रहे हैं कि ऐसा मेरा निजी विश्वास है –

मोरें मन प्रभु अस बिस्वासा | राम ते अधिक राम कर दासा ||

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड -१२०)

भगवान् से बड़ा भगवान् का दास है और यदि तुम्हें उसका संग मिल गया तो श्रद्धापूर्वक सेवा करते हुए उस भक्त-संग का वास्तविक लाभ प्राप्त करो | तर्क-वितर्क छोड़कर सर्वात्मभावपूर्वक भक्त से प्रेम करो क्योंकि संत (भक्त) के संग के बिना भक्ति नहीं मिलती है, जैसे - समुद्र में जल है, लेकिन अनंत है; एक तो समुद्र तुमको प्राप्त नहीं है, दूर है और प्राप्त भी हो जाए तो समुद्र का जल खारा है, तुम्हारे काम का नहीं है; वही पानी जब बादल बरसा कर लाता है तो तुम्हारे काम का हो जाता है, वह पानी बहुत अच्छा (Distilled Water से भी अधिक स्वच्छ) होता है | 'भगवान्' समुद्र की तरह अप्राप्य हैं – **राम सिंधु घन सज्जन धीरा |**

चंदन तरु हरि संत समीरा ||

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड -१२०)

संत लोग बादल की तरह हैं, वह समुद्र के जल को तुमको पीने के लायक बना के देते हैं, उसमें खारापन नहीं रहता है | पीने लायक पानी क्या है, भगवान् की मधुर लीला | खारापन क्या है ? समुद्र अनंत है, ऐश्वर्य अनंत है, उसमें से संतों ने भगवान् की लीलारूपी मक्खन निकाला, उतना ही संत लोग देते हैं, इसलिए वे बादल हैं | दूसरी उपमा दी गयी है – "चन्दन तरु हरि संत समीरा ||" चन्दन का पेड़ मलया गिरि में है, वहाँ जाओ तो चन्दन पर अनेक सर्प लिपटे होते हैं, वे काट लेंगे, तुम वहाँ जा ही नहीं सकते | उसी चन्दन की सुगंध जब हवा लाकर तुम्हारी नाक में पहुँचाती है तो न तो उसमें जहर होता है, न सर्प होता है; कोई खतरा नहीं होता है | साधु लोग हवा हैं | सर्प क्या है ? सर्प 'मोह' है | बिना संत के 'भगवान् की लीलाओं' में मोह हो जाएगा | सामान्य अवस्था में 'मोह' हो जायेगा, हर जीव को हो जाता है | ब्रह्मा को हुआ, सती को हुआ, गरुड़ को हुआ | संशय रहित, मोह रहित जहाँ भगवान् की लीलाओं का गान हो रहा है, वह चन्दन की सुगंध है, उसको सूँघो साक्षात् चन्दन के पास नहीं पहुँच सकते, पहुँचोगे तो वहाँ सर्प है, खतरा है | साक्षात् रूप से समुद्र में पानी लेने नहीं पहुँच पाओगे, जाओगे भी तो समुद्र का पानी खारा है और डूब जाओगे; इसलिए जिस पानी को बादल लाता है उसको ले लो क्योंकि उसमें न तो कोई डूबने

का खतरा है, न खारापन है | इसीलिये गोस्वामी जी ने कहा है – **सब कर फल हरि भगति सुहाई |**

सो बिनु संत न काहूँ पाई ||

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड -१२०)

भगवान् की विशुद्ध भक्ति, विशुद्ध भक्तों के पास मिलेगी | आज तक बिना सत्संग के किसी को कुछ नहीं मिला | इसलिए **"अस बिचारि जोइ कर सतसंगा | राम भगति तेहि सुलभ बिहंगा ||"** जो मनुष्य सत्संग करता है, उसको भक्ति मिल जायेगी | उदाहरण दिया गया –

ब्रह्म पयोनिधि मंदर ग्यान संत सुर आहिं |
कथा सुधा मथि काढ़हिं भगति मधुरता जाहिं ||

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड -१२०)

ब्रह्म अर्थात् 'वेद या ऐश्वर्यशाली भगवान् की लीलाएँ ये समुद्र हैं, उस समुद्र को मथा गया | "ज्ञान" मन्दराचल है और 'संतजन' देवता हैं, उस ब्रह्म की अनंत लीलाओं को संतजनों ने मथा | "कथा" अमृत है, मीठी है इसीलिये भक्ति करो | भक्ति करते समय इतना ध्यान रखो कि जैसे 'फूल का पौधा' लगाते समय उसको बकरियों से बचाने के लिए उसके चारों ओर बाड़ (रक्षा के लिए काँटेदार तार) लगाते हैं | अभी हम लोग साधक हैं, वैराग्य की ढाल बनाओ | कछुए की चर्म से ढाल बनती है | वैराग्य की ढाल बनाकर ज्ञानरूपी तलवार से मद और मोह ये सब वैरी हैं, इनको मार डालो और इस तरह भक्ति रूपी विजय प्राप्त हो जाएगी अर्थात् सत्संग करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि हमारे अन्दर वैराग्य भी रहे नहीं तो फिर मोह में चले जाओगे | बहुत से लडके-लड़की यहाँ सत्संग में आये, कुछ दिन रहे लेकिन बाद में फिर यहाँ से जाकर के उन्होंने ब्याह किया क्योंकि उनमें राग था, वैराग्य नहीं था | बिना वैराग्य की ढाल के कामादि प्रबल शत्रु मार डालेंगे | इसलिए ज्ञान की तलवार लो और मद, लोभ, मोह रूपी शत्रुओं को मार डालो | भगवान् की कृपा से यदि ऐसा संत-समागम मिल जाए, जहाँ सांसारिक विषय-चर्चा व निंदा आदि नहीं है, नित्य-निरन्तर कथा-कीर्तन होता रहता है तो उसे कभी भी मत छोड़ो; रात-दिन सत्संग (कथा-कीर्तन) में रहने से सहज ही दुस्तर मायाजाल से पार हो जाओगे | इसके बाद गोस्वामी जी ने बहुत से विरोधी तत्वों का वर्णन किया है कि कहीं ऐसा न हो कि तुम 'सत्संग' में जाओ और निंदा करने लग जाओ |

श्रीरामचरितमानस, उत्तरकाण्ड के १२० वें दोहे में तो उन्होंने भक्त-संत की महिमा सुनाई और उसके बाद अनेकों चौपाइयों में यही बात कही कि वहाँ (सत्संग में) जाकर के भक्तापराध मत करना, निन्दा में नहीं फँसना और इससे बचने के लिए गोस्वामीजी ने बहुत बढ़िया चौपाइयाँ लिखी हैं; क्योंकि हमारे समाज में अधिकतर सत्संग की चर्चा न होकर के निन्दा आदि ही होती है, इसलिए हमारा समाज तेजहीन है | रामचरितमानस के उत्तरकाण्ड के १२१ वें दोहे की चौपाइयाँ बहुत महत्त्व की हैं | आजकल समाज में चारों ओर माया का प्रभाव ही दिखाई दे रहा है | लोग साधु बनते हैं, वैष्णव बनते है, वेष बदलते हैं | लाल-पीला कपड़ा पहनकर कोई कुछ बनता है, कोई कुछ बनता है और साधु-वैष्णव समाज में जाने के बाद एक-दूसरे की कमी या निन्दा में फँस जाते हैं | इसीलिए गोस्वामीजीने लिखा –

परम धर्म श्रुति बिदित अहिंसा |
पर निन्दा सम अघ न गरीसा ||

(श्रीरामचरितमानसजी, उत्तरकाण्ड -१२१)

परम धर्म से हीन हो जाते हैं | 'रामदास' श्यामदास से चिढ़ता है, यह रोज होता है, एक-दूसरे पर क्रोध करना, द्रोह करना हिंसा है | 'निंदा-कमी कहना-देखना और सुनना' इसके समान भारी पाप कोई नहीं है और तुम भले ही साधु हो लेकिन ऐसा करने पर जब मरोगे तो हजारो जन्मों तक मेंढक बनकर टर्र-टर्र करोगे |

हर गुर निंदक दादुर होई | जन्म सहस्र पाव तन सोई ||

'निन्दा करने वाला' नरक में जाने के बाद फिर कौवा बनता है और कांव-कांव करता है, घोर रौरव नरक मिलेगा, भगवान् मिलेंगे नहीं | उल्लू बनोगे और घोर मोह के अँधेरे में घूमा करोगे, ज्ञान भक्ति का सूर्य नहीं रहेगा; सभी प्राणियों की निन्दा करने वाला चमगादड़ बनता है | इसलिए सभी प्रकार के अपराधों से बचने के लिए सतत सत्संग का श्रवण-मनन करते हुए सत्संगमय जीवन बनाओ |

"श्री राधा महाविद्यालय" बरसाना (उ.प्र.) की मार्गदर्शिका बनीं –

'उत्तर प्रदेश रत्न' से सम्मानित मशहूर कथक नृत्यांगना 'डॉ पूर्णिमा पाण्डेय' –

(आपका परिचय)

विगत पांच दशकों से अधिक, निरंतर कथक नृत्य कला के प्रदर्शन एवं शिक्षण के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित डॉ० पूर्णिमा पाण्डे संगीत जगत में एक श्रेष्ठ गुरु, वरिष्ठ नृत्यांगना और कुशल प्रशासक के रूप में प्रतिष्ठित हैं।आपने देश के दो ख्याति प्राप्त विश्वविद्यालयों,यथा भातखण्डे संगीत विश्वविद्यालय, लखनऊ तथा इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय, खैरागढ़ के कुलपति पद पर भी अपनी अमूल्य सेवा प्रदान कर संगीत जगत को समृद्ध किया है। विगत कुछ वर्षों डॉ० पूर्णिमा ने उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी के अध्यक्ष पद पर रहते हुवे प्रशंसनीय कार्य किये। आपने देश-विदेश में अपनी नृत्यकला के सफल कार्यक्रमों से ख्याति अर्जित कर देश का गौरव बढ़ाया जिसके लिए अनेक सम्मानों और पुरस्कारों से आपको नवाज़ा गया।हाल ही में इन्हें संगीत के क्षेत्र मे किये गए उत्कृष्ट कार्य के लिए UPSNA द्वारा उ० प्र० रत्न सम्मान घोषित किया गया

विरक्त संत परम पूज्य
श्री रमेश बाबाजी महाराज

श्री राधा संगीत विद्यालय

श्री मान मंदिर, गह्वरवन, बरसाना

RNI Reference No. 1313397 | Registration No. UP BIL-2017/72945 | Title Code: UP BIL-04953 | Postal Regd. No. MTR 093/2018-20

1. ब्रज के वनों, पर्वतों की रक्षा के प्रति आंदोलन को एकजुट ब्रजप्रेमी भक्त।
2. आमरण अनशन पर साधु जान
3. ब्रज पर्यावरण संरक्षण सक्रिय सदस्यता अभियान द्वारा हजारों गाँव, नगर को जोड़ा जा रहा है।

श्री मान मंदिर सेवा संस्थान के लिए प्रकाशक/मुद्रक एवं संपादक राधाकांत शास्त्री द्वारा Gupta Offset Printers A -125 /1, Wazirpur Industrial Area, New Delhi, 110052 से मुद्रित एवं मान मंदिर सेवा संस्थान, गहर वन, बरसाना, मथुरा (उ.प्र.) से प्रकाशित